विषय-सूची

Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

जनसंख्या वृद्धि और पर्यावरण असन्तुलन

डॉ० रामगोपाल

पृथ्वी पर मानव का विकास लगभग 1 लाख वर्ष पूर्व हुआ तबसे यह निरन्तर चला आ रहा है। आदिकाल में अकाल मृत्यु, प्राकृतिक प्रकोप, संक्रामक बीमारियाँ एवं न्यून जन्म दर के कारण जनसंख्या की वृद्धि कोई समस्या नहीं थी परन्तु पिछले कुछ दशकों में तीव्रगति से बढ़ती हुई जनसंख्या ने विस्फोटक स्थिति उत्पन्न कर पूरे विश्व को अपने विकराल पंजों में जकड़ लिया है, जिससे ग्रामीण और शहरी दोनों ही क्षेत्र प्रभावित हुए हैं। राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, पारिवारिक और व्यक्तिगत स्तरों पर इसके दुष्परिणाम सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रहे हैं। वैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार सन् 1650 में विश्व की जनसंख्या 50 करोड़ थी जो 1800 में 1 अरब, 1920 में 2 अरब और 1987 में 5 अरब तक पहुँच गई है। सन् 2000 तक यह 6 अरब और 2010 तक 7 अरब हो जायेगी, (देखें सारणी 1)।

सारणी 1

विश्व की बदलती जनसंख्या

काल	जनसंख्या
प्रथम ईसवी में	30 करोड़
1750 तक	50 करोड़
1850 तक	1.3 अरब
1900 में	1.7 अरब
1950 में	2.5 अरब
1974 में	3.7 अरब
2000 में अनुमानतः	9.4 अरब

वैज्ञानिक, रक्षा प्रयोगशाला, जोधपुर-342201

जनसंख्या के आधार पर यदि हम प्रमुख 10 देशों की ओर दृष्टि डालें तो भारत का स्थान दूसरा है। भारत में सन्तानोत्पत्ति की दर इस समय प्रति 1000 व्यक्ति पर 40 है और प्रति मिनिट 50 बच्चे जन्म लेते हैं। इस प्रकार एक माह में लगभग 12 लाख व्यक्ति बढ़ जाते हैं। यदि जनसंख्या पर नियन्त्रण न किया गया तो इस शताब्दी के अन्त तक भारत की जनसंख्या अनुमानतः 1 अरब हो जायेगी। सारणी 2 में भारत की जनसंख्या वृद्धि दर्शायी गयी है।

सारणी 2

भारत की जनसंख्या

वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)
1901	23.83
1911	25.20
1921	27.12
1931	29.89
1941	31.85
1951	36.10
1961	40.91
1971	54.79
1981	68.31
सन् 2000 में अनुमानतः	97.40

इस प्रकार भारत की जनसंख्या आज विश्व की जनसंख्या की 16 प्रतिशत हो गई है, जबकि 1981 में यह 15.2 प्रतिशत ही थी। इस तरह पिछले 10 वर्षों में जो जनसंख्या इस देश में बढ़ी है वह पूरे जापान की आबादी या आस्ट्रेलिया की 10 गुनी आबादी के बराबर है। जनसंख्या वृद्धि पर यदि अंकुश नहीं लगाया गया तो भारत की जनसंख्या शीघ्र ही चीन की जनसंख्या से भी अधिक हो जायेगी।

मनुष्य की प्रत्येक गतिविधि पर्यावरण को प्रदूषित करती है। इस जनसंख्या वृद्धि ने हमारे चारों ओर के आवरण को प्रदूषित किया है। हमारे चारों ओर की वायु, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, मिट्टी, पानी और सूर्य से आने वाला प्रकाश जो कि हमारे पर्यावरण के अंग हैं, किसी न किसी प्रकार प्रभावित हुए हैं।

पर्यावरण और प्रदूषण से सम्बन्धित इन समस्याओं की ओर सारे विश्व का ध्यान आकर्षित करने के लिए 5 जून सन् 1972 को स्वीडन के स्टाकहोम नगर में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया

गया था तथा संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में आयोजित इस सम्मेलन में अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए थे। फलस्वरूप 5 जून सारे संसार में "विश्व पर्यावरण दिवस" के रूप में मनाया जाता है।

विश्व में पर्यावरणीय समस्याओं का समाधान एक पाँचस्तरीय माडल द्वारा किया जा सकता है, जिसके अन्तर्गत (1) भूमण्डलीय (2) महाद्वीपीय (3) आंचलिक (नदीय) (4) धरातलीय (क्षेत्रीय) और (5) स्थानीय समस्याओं का निदान सम्मिलित है (देखें चित्र 1)
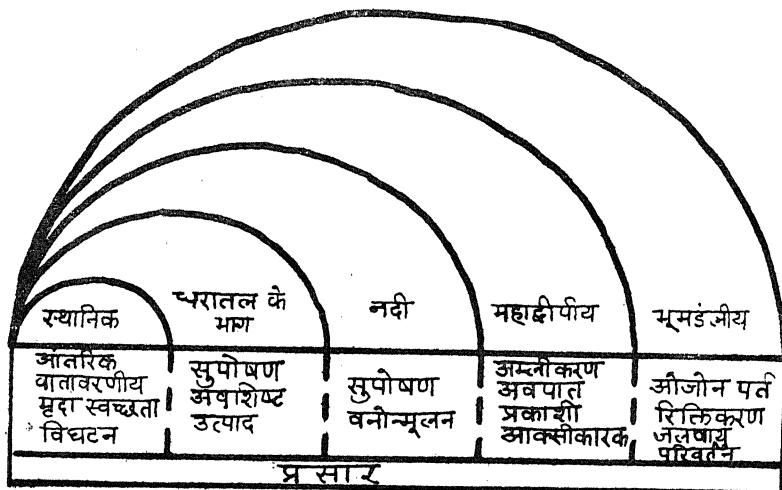
चित्र 1 : पाँच स्तरीय माडल

भूमण्डलीय समस्याओं के अन्तर्गत मुख्यतया पृथ्वी के 'सुरक्षा कवच' का जो समुद्र तल से 10 कि० मी०से 80 कि०मी०की ऊँचाई पर समताप मण्डल में ओजोन गैस की परत के रूप में है निरन्तर शिथिल पड़ना है। पृथ्वी की ओर आने वाले सौर विकिरणों को यह परत इस तरह छानती है कि पराबैंगनी किरणें तथा अन्य हानिकारक गैसें अवशोषित होकर हम तक नहीं पहुँचतीं। इस प्रकार ओजोन की यह परत पृथ्वी के लिए एक 'सुरक्षा कवच' का कार्य करती है। इस परत की मोटाई सब जगह एकसमान नहीं हैं। वैज्ञानिकों ने निरीक्षण करके यह निष्कर्ष निकाला है कि आर्कटिक (उत्तरी ध्रुव प्रदेश) एवं अंटार्कटिक (दक्षिण ध्रुव प्रदेश) के ऊपर ये परतें हल्की हो गई हैं मानों उनमें 'छेद' हो गया है और ये छेद अमेरिका जैसे विशाल देश के बराबर हैं। इसका मुख्य कारण वायुमण्डल में फ्लोरोक्लोरो कार्बन और हेलोजन की बढ़ती मात्रा है जिनका कि प्रक्षालक, प्रशीतक, निर्जल धुलाई करने वाले द्रव-विलायक, उच्च ऊँचाई पर उड़ने वाले सुपरसोनिक जेट विमानों आदि में अंधाधुँध प्रयोग है। फलस्वरूप विभिन्न प्रकार के चर्मरोग, नेत्ररोग, कैंसर, असमय शरीर पर झुरियां पड़ना, बुढ़ापा आदि रोगों में बढ़ोत्तरी होगी। इसके अतिरिक्त विशेषकर विकासशील देश वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की अत्यधिक मात्रा निष्कासित कर रहे हैं जो वातावरण के ताप में 5° से० तक की वृद्धि लाकर पर्यावरण में असन्तुलन उत्पन्न कर रही है। इस तरह मौसम अत्यन्त भयंकर रूप से प्रभावित हो रहा है। इसे "हरित गृह प्रभाव" कहा जाता है।

दूसरे स्तर के अन्तर्गत महाद्वीपों में अम्लीकरण अवपात, कुछ विशेष प्रकार के हाइड्रोकार्बन और अपचीय पदार्थ जैसे कि भारी व विषैली धातुएँ, कीटनाशक आदि का निष्कासन सम्मिलित हैं। इनकी 80 से 90 प्रतिशत तक की कमी स्वस्थ जंगलों के निर्माण और उनके संरक्षण में सहायक सिद्ध होगी।

नदी सम्बन्धी आंचलिक समस्याओं के अन्तर्गत सतही और भू-जल स्रोतों का संरक्षण है। इसके अन्तर्गत शुद्ध पेय जल की सुलभता, मत्स्य उत्पादन और शुद्ध एवं खारे पानी के पारिस्थितिक तंत्र से जुड़े जल जन्तु एवं जल पादप की समस्याओं के निदान के लिए विषैले पदार्थों एवं अपचित धातुओं के निष्कासन में कमी, नदियों व समुद्र में आने वाली प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा सम्मिलित हैं।

क्षेत्रीय (धरातल से सम्बन्धित) व स्थानिक समस्याओं के अन्तर्गत औद्योगिक प्रदूषण, विषैले तत्व, ध्वनि प्रदूषण और अन्य प्रदूषण सम्मिलित हैं जो जनसंख्या वृद्धि से सीधे जुड़े हुए हैं।

हमारे देश में पर्यावरण के संरक्षण के लिए वर्तमान व्यवस्थाओं की अपर्याप्तता का परीक्षण करने के लिए फरवरी 1990 में भारत सरकार ने एक उच्चस्तरीय समिति का गठन किया था। समिति ने पर्यावरणीय समस्याओं के स्वरूप एवं उनके आयामों का विस्तृत विवेचन किया जिसके आधार पर अनेक उपयोगी कदम उठाये गये हैं।

आज शहरीकरण विकास का प्रतीक बन गया है। शहरों में एक विशेष असन्तुलन गाँव से भागती जनसंख्या के कारण हो रहा है जिसके फलस्वरूप आवास, यातायात, स्वच्छता, शुद्ध पानी, शुद्ध वायु, कानून और शांति और दुर्घटनाएँ आदि की समस्यायें बढ़ती जा रही हैं। सन् 1961-71 में जहाँ 35 प्रतिशत लोग ग्रामीण क्षेत्रों से आये थे वहीं 1971-81 के दशक में 47 प्रतिशत लोग ग्रामीण क्षेत्रों से आये। विश्व स्वास्थ्य संगठन (1991) की रिपोर्ट के अनुसार 2000 तक विश्व की आधी जनसंख्या नगरों में रह रही होगी। इस बढ़ती जनसंख्या का नगरों के पर्यावरणीय संसाधनों पर दबाव बढ़ा है। भारत में पर्यावरणीय समस्याओं को दो व्यापक वर्गों में रखा जा सकता है :

(अ) गरीबी और अविकास की अवस्थाओं में पैदा होने वाली समस्याएँ

और (ब) विकास की प्रक्रिया के नकारात्मक प्रभावों के कारण पैदा होने वाली समस्याएँ।

पहले वर्ग का सम्बन्ध हमारे प्राकृतिक संसाधनों—भूमि, मृदा, जल, वन, वन्य जीवन के स्वास्थ्य और अखण्डता के प्रभाव से है। यह निर्धनता अधिकांश बुनियादी मानवीय आवश्यकताओं जैसे कि रोटी, ईधन, मकान और रोजगार को पूरा न कर पाने के कारण है। दूसरे वर्ग का सम्बन्ध वैज्ञानिक प्रगति के कारण तेज आर्थिक वृद्धि और विकास करने के अनुदृश्य सहप्रभावों से है, जिसके अन्तर्गत निहित स्वार्थों के कारण दीर्घकालीन हितों पर ध्यान न देते हुए अनियोजित विकास परियोजनाओं के कारण प्राकृतिक संसाधनों की क्षति है। भारत में जनसंख्या वृद्धि से जुड़ी कुछ मुख्य पर्यावरणीय समस्याएँ

निम्नवत् हैं :

(1) भूमि और जल संसाधन

(2) प्राकृतिक सजीव संसाधन

(3) पर्यावरणीय प्रदूषण

(4) स्वास्थ्य से जुड़ी समस्यायें

1. भूमि और जल संसाधन

मार्च 1980 में कृषि मंत्रालय द्वारा किये गये अनुमानों के अनुसार देश के 30.5 करोड़ हेक्टेयर कुल भूमि क्षेत्र में से 17.5 करोड़ हेक्टेयर भूमि को पर्यावरणीय समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है (सारणी 3)।

सारणी 3

पर्यावरण समस्या से ग्रस्त भूमि क्षेत्र

भूमि क्षेत्र	क्षेत्रफल (करोड़ हेक्टेयर)
गम्भीर जल और वात कटाव	15.00
भूमिग	0.30
जलाक्रांत	0.60
लवणीय मृदाएँ	0.45
क्षारीय मृदाएँ	0.25
दियारा भूमि	0.24
अन्य कृषियोग्य बंजर भूमि जिसका उद्धार किया जाना चाहिये	0.66
कुल	17.50

देश के अपने भूमि संसाधनों की इस लगातार क्षति से जो हानि हो रही है वह हमारी आर्थिक प्रगति के लिए एक उल्लेखनीय खतरा है। भारत में जलकटाव के कारण औसतन 6 अरब टन प्रतिवर्ष की दर से सतही मिट्टी की हानि हो रही है और केवल नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटैशियम, के रूप में पोषक तत्वों की हानि 7 अरब रुपये की वार्षिक हानि के तुल्य है। वनों के कटने, गहरी जुताई करने, बाँधों, सुरंगों, सड़कों आदि के निर्माण, खनिज पदार्थों की खुदाई, कृत्रिम रासायनिक खादों व कीटनाशी रासायनों के उपयोग के कारण मृदा प्रदूषण प्रतिदिन बढ़ रहा है। मृदा का यह अपरदन

तालाबों और जलाशयों का समय से पूर्व कीचड़ से भर जाने के कारण हो रहा है । इन परियोजनाओं में हमारी 10 करोड़ रुपये से अधिक पूंजी लगी हुई है । नदियों द्वारा समुद्र को ले जाई जा रही अपरदित मृदा के प्रतिकूल प्रभाव के कारण ज्वार नदी के मुहानों और बन्दरगाहों का बन्द हो जाना इसी प्रकार का एक और प्रभाव है । हिमालय में जंगलों के गिराने से हुई भारी क्षति और जलसंसाधनों की क्षति को भी नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता । इस क्षेत्र में पेड़ों की कटाई रोकने के लिए 'चिपको आन्दोलन' के द्वारा वहाँ के स्थानीय लोग संघर्षरत हैं । जहाँ-जहाँ जंगलों को गिराया गया है, वर्षा के पानी का बहाव उन ढलानों की अपेक्षा कहीं अधिक तेज होता है, जहाँ घने जंगल हैं । अत: उस जल की बहुत बड़ी मात्रा अक्सर पृष्ठ जल के रूप में तेज बहाव के कारण बेकार बह जाती है जिसे **भूमिगत** जल अथवा **भौम जल** के रूप में बनाये रखे जाना चाहिए था । साथ ही इसके कारण भूमि का और अधिक कटाव व क्षरण होता है तथा बाढ़ें आती हैं ।

पर्याप्त जल निकासी व्यवस्था प्रदान करने में असफलता के कारण नहर-सिंचित क्षेत्रों के जलाक्रांत होने और परिणामस्वरूप लवणीकरण से कृषि-भूमि को हुई क्षति भी उल्लेखनीय हैं । यह महत्वपूर्ण है कि पर्याप्त जल निकास व अन्य उपयुक्त सुधार उपायों की व्यवस्था करके प्रभावित कदम उठाए जाएँ ।

मृदा प्रदूषण का सर्वाधिक विकराल स्वरूप कूड़ा-कचरे की समस्या है जो कि जनसंख्या वृद्धि का ही परिणाम है । टूटे-फूटे बर्तन, सड़े गले पदार्थ, फटे पुराने कागज, चिथड़े, कपड़े, प्लास्टिक, पॉलीथीन की थैलियाँ एवं राख आदि के रूप में मानव प्रगति ने पृथ्वी को पाट ही रखा है । इसके साथ वनों के कटने, गहरी जुताई, सड़कों के निर्माण, खदानों आदि के निर्माण से ढीली हुई मिट्टी हवा एवं पानी के साथ बह जाती है और भूमि की उर्वरता को बहुत बड़ा नुकसान होता है । कीटनाशी, खरपतवारनाशी और कवकनाशी की कुछ मात्रा भूमिगत जल में घुल जाती है । कभी-कभी यह कृषि उत्पादों में भी पायी गयी है—बिशेषकर नाइट्राइट प्रदूषित जल कैंसर का भी कारण बन सकते हैं । कहीं मानव रक्त में इन कीटनाशकों के अंश भी पाए गए हैं ।

2. प्राकृतिक सजीव संसाधन

प्रकृति अपनी जैविक शक्ति का सहारा लेकर थोड़ी सी ऊर्जा से अपना काम चलाती है और निरन्तर उपयोग की हुई ऊर्जा को ही दुबारा प्रयोग में लाती है । लाखों वर्षों से जो पृथ्वी पर जैव सामग्री है, वह 2 अरब टन आँकी गई है । इसका 10 प्रतिशत अंश ही परिवर्तित होता रहता है । प्रकृति पृथ्वी, समुद्र और वायुमण्डल का स्वत: नियन्त्रण करके आदर्श तकनीक और प्रबन्ध-कौशल से एक कार्य-कुशल वृहत उद्यम का अनुकरणीय मॉडल प्रस्तुत कर रही है । परन्तु मनुष्य ने इसमें हस्तक्षेप कर पर्यावरण असन्तुलन को जन्म दिया है और आज पृथ्वी पर विचित्र स्थिति उत्पन्न हो चुकी है । हम 4 अरब प्राणियों के कारण लगभग 30 हजार पौधों की नस्लें नष्ट हो गई हैं या होने जा रही हैं । 12 हजार किस्म के पक्षी और स्तनपायी जन्तुओं में से 200 किस्में नष्ट हो गई हैं और लगभग 1000 नष्टप्राय हैं । भारत में हाल में चौपायों और पक्षियों की पाँच प्रजातियाँ विलुप्त हो गई हैं, जबकि वन्य जीवन (प्रतिरक्षा) अधिनियम 1972 के अधीन ऐसी 103 प्रजातियों के समूल नष्ट हो जाने की

सम्भावना है जिसका प्रमुख कारण उपमहाद्वीप में प्राकृतिक वनों और पारितन्त्रों का बड़ी तेजी से कम होना है। इस बीच मनुष्य जाति में 6 गुना बढ़ोत्तरी हुई है जिसके कारण खाने-पीने की खपत 10 गुना बढ़ गई है। इसके अतिरिक्त पृथ्वी की उर्वर परत गहन खेती के कारण जहाँ एक ओर पतली हो रही है वहीं पृथ्वी पर उपयोग योग्य जमीन में भवनों के निर्माण, भूक्षरण और रेगिस्तानों की वृद्धि से काफी कमी आयी है। इस पृथ्वी का आकार तो वैसा का वैसा रहेगा परन्तु जब विश्व की जनसंख्या 6 अरब पहुँच जायेगी तब संसाधनों पर बहुत अधिक बोझ पड़ेगा। मानव छेड़छाड़ से बिगड़े हुए प्राकृतिक संतुलन को चित्र 2 में और खेतों में रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग एवं औद्योगिक अवशेषों से पर्यावरण पर पड़ते हुए प्रभाव को चित्र 3 में दिखाया गया है।
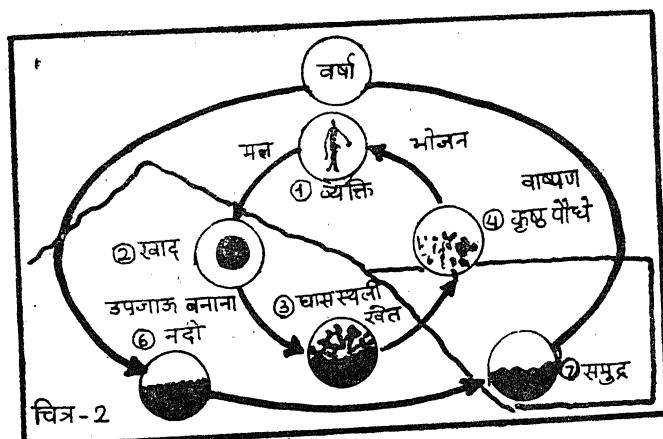
चित्र 2 : प्राकृतिक सन्तुलन बिगड़ा है व्यक्ति की दखलन्दाजी से
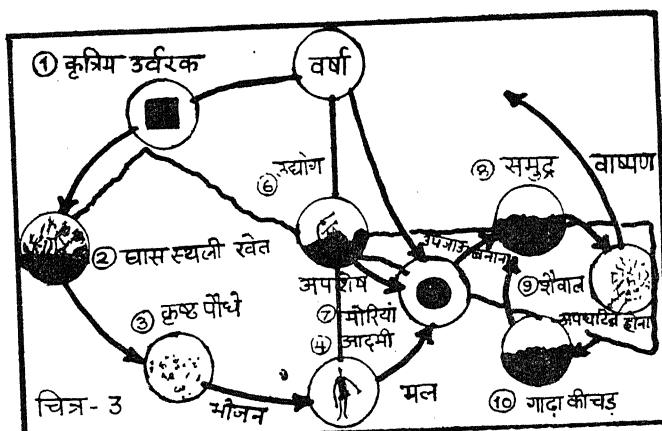
चित्र 3 : खेतों में खाद के अत्यधिक उपयोग एवं औद्योगिक अवशेषों से पर्यावरण पर बुरा असर पड़ा है

मानव जीवन को ईंधन, चारा, खाद्य, उर्वरक, रेशा, रसायन तेल, कागज, औषधि, वस्त्र, माचिस मसाले आदि देने के अतिरिक्त वृक्ष विकिरणों को अवशोषित और परावर्तित करते हैं। ये प्रकाश-संश्लेषण द्वारा कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित कर जीवनदायिनी आक्सीजन मुक्त करते करते हैं। इसके अतिरिक्त छोटे जन्तुओं, पक्षियों और कीड़ों को रहने का स्थान, भोजन व आश्रय देते हैं। गिरी हुई पत्तियाँ उर्वरता बढ़ाती हैं। जड़ें मिट्टी को कटने व बहने से बचाती हैं। वनस्पति नमी और वर्षा को नियन्त्रित करते हुए पर्यावरण सन्तुलन बनाये रखती है। भारत के लगभग पाँच करोड़ आदिवासियों के लिए वन कटने का अर्थ है, संस्कृति और समाज का विनाश जो कि शनैः शनैः चरितार्थ हो रहा है और ये आदिवासी वनसम्पदा के अत्यधिक दोहन के शिकार होकर शहरों की ओर पलायन करने लगे हैं।

समुद्री पारितन्त्र : मन्नार की खाड़ी (तमिलनाडु), पिरोटन द्वीप (गुजरात) और लक्षद्वीप और अण्डमान द्वीपसमूह में सीमेंट बनाने के लिए प्रवाल भित्तियों का जो कि चूने के पत्थर में होती हैं, अंधाधुंध विनाश किया जा रहा है, जिससे तटीय क्षेत्रों के समुद्री कटाव को खतरा पैदा हो गया है।

3. पर्यावरणीय प्रदूषण

अनियोजित औद्योगीकरण, गुणोत्तर श्रेणी में बढ़ती हुई जनसंख्या की मांग को पूरा करने के लिए अविवेकपूर्ण विधि से प्राकृतिक संसाधनों का दोहन तथा विज्ञान की अंधी दौड़ के अन्तर्गत लिए गए विकास कार्यक्रमों ने हमारे प्राकृतिक पर्यावरण को बुरी तरह क्षतिग्रस्त कर दिया है। इनमें वायु, जल, भूमि, शोर, विकिरण और गंध में से जीवन को प्रभावित करने वालों में जल प्रदूषण के प्रभाव सबसे गम्भीर हैं।

जल प्रदूषण : भारत में 14 प्रमुख नदियाँ हैं जो 85 प्रतिशत जल को बहाकर ले जाती हैं। इनके बेसिन क्षेत्रों में देश की 80 प्रतिशत आबादी रहती है। भारत की बढ़ती आबादी की जल माँग की पूर्ति के अलावा कृषि उद्योग, मत्स्यशालाओं, नौकाचालन और विद्युत निर्माण के लिए जल की आवश्यकता पूरी की जानी चाहिए। ये सभी नदियाँ नगरों, उपनगरों और महानगरों के जल-मल और व्यवसायों से निष्कासित दूषित जलों की कूड़ादान (सिंक) बन गई हैं यहाँ तक कि सबसे पवित्र नदी गंगा भी इतनी मैली हो गई थी कि विशेष कार्य योजना के अन्तर्गत इसका प्रदूषण नियन्त्रित करने के लिए भगीरथ प्रयास किए जा रहे हैं। इससे सुखद परिणाम सामने आये हैं। जल प्रदूषण के प्रतिकूल प्रभावों में जल प्रवाहित रोग जैसे हैजा, टायफाइड, पीलिया और पेचिश के कारण मछलियाँ, अन्य जल जन्तुओं और मनुष्यों को अनेक रोग हो रहे हैं। अनेक स्थानों पर विषैली धातुओं के कारण मछलियों की सामूहिक हत्या और प्रदूषित पानी के उपयोग से कृषि उपज में कमी हो रही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के सर्वेक्षणानुसार लगभग 80 प्रतिशत मृत्यु का कारण गाँव में जल सम्बन्धित रोग हैं जिनका प्रमुख कारण बढ़ती हुई जनसंख्या में व्याप्त अशिक्षा और अस्वच्छता है।

पेयजल का संकट एक अन्य गहन समस्या है। सारे जलस्रोत बढ़ी हुई आबादी का बोझ उठाने में सक्षम नहीं है। भारत सरकार ने इस समस्या के समाधान के लिए सन् 1986 में गठित राष्ट्रीय पेयजल

मेशन के अन्तर्गत प्रत्येक नागरिक को स्वच्छ पीने का पानी उपलब्ध कराने की दिशा में युद्ध स्तर पर कार्य प्रारम्भ कर दिया है।

वायु प्रदूषण : यह विशेषकर औद्योगिक विकास और नगरीकरण से सम्बद्ध है। विश्व के अधिकतर देशों में धूम कोहरा (स्मोग), जो कोयले और तेल दहन के बहि:स्राव और कारों से निकलने वाले धुएँ के मिश्रण से बनता है, श्वास रोग और फेफड़ों के कैंसर का कारण है। यहाँ तक कि धातु, पत्थर और अन्य पदार्थों पर भी प्रदूषकों का काफी प्रभाव पड़ता है। यथा ताजमहल जैसी प्राचीन इमारत को भी होने वाली हानि इसमें सम्मिलित हैं। भीड़-भाड़ वाले कलकत्ता की वायु में 5.5 टन धूल, 122 टन सल्फर डाइआक्साइड, 440 टन कार्बनमोनोआक्साइड, 70 टन नाइट्रोजन आक्साइड और 102 टन हाइड्रोकार्बन उपस्थित बताये जाते हैं। इस प्रकार वहाँ की वायु में प्रतिदिन 1299 मीट्रिक टन प्रदूषक रहते हैं। वैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार 200 हाइड्रोकार्बन यौगिक धुएँ के साथ निकलते हैं। पौधों पर भी सल्फर आक्साइड, ओजोन, नाइट्रोजन आक्साइडों, हैलोजन यौगिक, अमोनिया एथिलीन, पारा, सीसा और कुछ भारी धातुओं का गम्भीर प्रभाव पड़ता है। यह पाया गया है कि कारों के बहि:स्राव में से प्राप्त होने वाला उपजात परआक्सीऐसीटिलनाइट्रेट एक ऐसा प्रदूषक है जो पौधों की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया को दबा देता है। भारतीय मौसम विज्ञान की एक रिपोर्ट के अनुसार पिछले 60 वर्षों में कोयला व खनिज तेलों के जलने से ही वायुमण्डल में कार्बनडाइआक्साइड की मात्रा 13 प्रतिशत बढ़ी है, फलतः उसके ताप में भी वृद्धि हुई है। वैज्ञानिकों के सर्वेक्षण के अनुसार वायुमण्डल में कार्बन डाइआक्साइड का सान्द्रण दस लाख अंशों में 350 अंश हो गया है जबकि 19वीं शताब्दी के मध्य यह सान्द्रण केवल 280 अंश था। भारत सरकार ने 1984 में वायु प्रदूषण कानून की स्थापना कर हानिकारक तत्वों की सर्वाधिक मात्रा वायुमण्डल में निर्धारित करने के लिए औद्योगिक इकाइयों के इर्द-गिर्द 'हरित पट्टियों' की स्थापना का भी सुझाव रखा है। भारत की राजधानी दिल्ली में इस बढ़ी हुई जनसंख्या के आवागमन में प्रयुक्त वाहनों और उद्योगों द्वारा प्रदूषित वायु का अध्ययन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकाला गया है कि वहाँ 15 लाख वाहन प्रतिवर्ष चलते हैं जिससे फेंफड़ों में जमते धुएँ के कारण मनुष्य की आयु कम होती जा रही है तथा उनके हृदयों के आकार में भी वृद्धि पाई गई है! विश्व के सबसे विकसित एवं समृद्ध देश अमेरिका में प्रत्येक नागरिक को प्रतिवर्ष 4 कि० ग्रा० प्रदूषित वायु का सेवन करना पड़ता है। यह आँकड़ा 'नेशनल टाक्सिक रिलीज ऐजेन्सी' ने जारी किया है जो अमेरिकी पर्यावरण सुरक्षा ऐजेन्सी का सहयोगी है।

वायु प्रदूषकों की अन्य श्रेणियों में जीवाणुओं और परागकणों सहित ऐसे अनेक कण सम्मिलित हैं जो कि अनेक एलर्जी रोगों के कारण हैं। इन जैविक स्रोतों में फफूंद, जीवाणु, शैवाल, वायरस और विभिन्न पौधों के परागकण होते हैं। कुटीर और लघुस्तर उद्योगों में काम करने वाले लोगों की संख्या लगभग 1 करोड़ है जो कि सिलिकोसिस, न्यूमोकोनियोसिस, अन्य श्वास रोगों, चर्म रोगों आदि से विभिन्न प्रदूषकों के कारण पीड़ित हैं।

शोर प्रदूषण : कलकत्ता, बम्बई, दिल्ली, मद्रास जैसे महानगरों में रहने वाले नागरिक शोर प्रदूषण के शिकार हैं—विशेषकर फैक्ट्रियों, रेललाइनों, मुख्यमार्गों और हवाई अड्डों के निकट रहने

वाले लोगों पर शोर प्रदूषण का प्रमुख प्रभाव पड़ता है जिससे उनकी श्रवण-क्षमता नष्ट हो जाना है, मानसिक तनाव, रक्तचाप वृद्धि, नींद की बीमारी और दिल की तेज धड़कन शामिल हैं। सामान्यत: शोर के मामलों में 20 से 40 डेसीबल को सामान्य स्तर माना जाता है जबकि शहरों में, महानगरों में इसका स्तर 60-80 डेसीबल तक रिकार्ड किया गया है (देखें सारणी 4)। फैक्ट्री, विमानों और अन्य उपकरणों से 100 डेसीबल से अधिक तक शोर की तीव्रता मापी गयी है।

सारणी 4

शोर की तीव्रता

ध्वनि उत्पादक	तीव्रता (डेसीबल)
फुसफुसाहट	20
गलियों में शोरगुल	40-70
सामान्य बातचीत	60
उपनगरीय बाजार	75
व्यस्त व्यापारिक बस्तियाँ	80
कार हार्न एवं खराद मशीन	85-95
हवाई अड्डे के निकट की बस्ती	95
आरा मशीन	100-110
बिना साइलेंसर की मोटर साइकिल	130
संवेदना आरम्भ	130
पीड़ा आरम्भ	140

4. स्वास्थ्य से जुड़ी समस्यायें

हमारे प्राकृतिक पर्यावरण में पाँच खाद्य श्रृंखलाएँ उपलब्ध हैं :

(1) सूर्य→पौधे→मानव (शाकाहारी)→अपघटक पदार्थ→मृदा→पौधे।

(2) सूर्य→पौधे→शाकाहारी (प्राणी) खरगोश→मानव (मांसाहारी)→अपघटक पदार्थ→मृदा →पौधे।

(3) सूर्य→पौधे→खरगोश (शाकाहारी)→शेर (मांसाहारी)→अपघटक पदार्थ→मृदा→पौधे।

(4) सूर्य→पौधे→खरगोश→अपघटक पदार्थ→पौधे ।

(5) सूर्य→पौधे→अपघटक पदार्थ→पौधे ।

इन श्रृंखलाओं के बीच में एक अटूट सम्बन्ध है परन्तु यदि इनमें से कोई भी एक भी श्रृंखला टूटती है तो अगली कड़ी भुखमरी की शिकार हो उसके अस्तित्व के लिए प्रश्न चिन्ह लगा देती है । इन श्रृंखलाओं में असन्तुलन स्पष्ट दिखने लगा है ।

जनसंख्या वृद्धि का एक अपरोक्ष प्रभाव स्पष्टतः समाज में भुखमरी, अशिक्षा, आतंकवाद और अलगाववादी प्रवृत्ति मनोरोगों के रूप में विकसित हो रही है । मुझे यह भय है कि प्रकृति इस असन्तुलन को यदि अन्य प्राणियों और कीट पतंगों की भाँति मनुष्यों में भी हल करने लगे तो बड़ी विकट स्थिति होगी । अनेक कीट-पतंगों, मछलियों और द्वीपों में रहने वाले चूहों की संख्या में जब असाधारण वृद्धि हो जाती है तो इनके मस्तिष्क से एक ऐसा अंतःस्राव उत्सर्जित होता है जो इन्हें सामूहिक रूप से आत्महत्या द्वारा नष्ट होने के लिए प्रेरित करता है ।

उपसंहार : सुखी भविष्य के लिए पर्यावरण सन्तुलन बनाये रखना परम आवश्यक है अतः इस दिशा में विश्व को निम्नलिखित कार्यक्रम करने होंगे :

(1) तुरन्त अधिक से अधिक क्षेत्रों में ऊर्जा का उपयोग शुरू हो जो प्राकृतिक रूप से शाश्वत उपलब्ध हो या जिसे पुर्नजीवित किया जा सके जैसे पेट्रोल या कोयले के स्थान पर सूर्य ऊर्जा का अधिकाधिक उपयोग, नाभिकीय ऊर्जा, भूगर्भीय ऊर्जा, पवन ऊर्जा और जल विघटन से प्राप्त हाइड्रोजन का उपयोग ।

(2) वातावरण में कार्बन डाइऑक्साइड कम करने के सभी प्रभावशाली उपाय करना जिससे वायुमण्डल की बढ़ती हुई गर्मी में कमी आये ।

(3) वायुमण्डल में ओजोन परत को नष्ट कर रहे सभी रासायनिकों पर पाँच साल की अवधि में विश्वव्यापी प्रतिबन्ध लगाना, जो धरती का तापमान बढ़ा रहे हैं ।

(4) पुराने प्राकृतिक जंगलों की सुरक्षा और नये वनों का लगाना ।

(5) ऐसी वस्तुओं पर प्रतिबन्ध जो प्रकृति में घुल-मिल नहीं जाती या जिन्हें पुनर्चक्रित नहीं किया जा सकता । प्रत्येक समुदाय कागज, कांच आदि वस्तुओं के पुनर्नवीकरण करने का कार्यक्रम बनायें ।

(6) ऐसी स्थाई सन्तुलित विश्व जनसंख्या हो जो सुविधाजनक सतत कृषि व उद्योग को व्यवहार में ला सके ।

(7) नष्टप्राय होती जा रही वनस्पतियों और प्राणियों की प्रजातियों के संरक्षण के उपाय करना ।

(8) एक ऐसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का गठन, जो वायुमण्डल, समुद्र, मृदा आदि जैसी प्राकृतिक धरोहरों को खतरे से बचाने के लिए अधिकृत हो।

(9) स्थाई सन्तुलित विश्व जनसंख्या हो।

पर्यावरण प्रबन्ध के लक्ष्यों के अन्तर्गत पर्यावरणीय योजना, पर्यावरणीय स्थिति का आकलन, पर्यावरणीय संगठन का मूल्यांकन और पर्यावरणीय कानूनी व्यवस्था एवं उनका उपयुक्त प्रशासन होना चाहिए। पर्यावरण योजना का लक्ष्य आर्थिक विकास के साथ-साथ पर्यावरण की रक्षा करना है। पर्यावरण कानून व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न मामले जैसे भूमि उपयोगिता, जलाधिकार, प्रदूषण नियन्त्रण एवं निराकरण· वन संरक्षण, वन्य जीव संरक्षण, नगर आयोजन, औद्योगिक अधिकार, विभिन्न नशीली व विषैली रासायनिक वस्तुओं के उत्पादन सम्बन्धी अधिनियम, अपशिष्ट पदार्थों का सम्बन्ध, खाद्य पदार्थों का प्रदूषण अथवा मिलावट, खनिज अधिकार आदि हैं। कानून व्यवस्था को सही रूप में सफल बनाने के लिए प्रोत्साहन एवं शिक्षा भी आवश्यक है।

सम्पूर्ण स्थिति को देखते हुए आज के सन्दर्भ में यह आवश्यक हो जाता है कि जहाँ जनसंख्या और आर्थिक विकास की दृष्टि से औद्योगीकरण व शहरीकरण आवश्यक हैं वहीं विकास एवं औद्योगीकरण प्रारम्भ करने से पहले पर्यावरण पर पड़ने वाले इनके प्रभाव को मूल्यांकन कर लिया जाय। अन्धाधुंध विकास व औद्योगीकरण की स्वीकृति कदापि न दी जाय। इस सम्बन्ध में मानव समाज में जागरूकता तथा कार्य प्रणाली व न्यायपालिका को समय-समय पर प्रभावी कदम उठाने की आवश्यकता है। वैज्ञानिकों तथा विज्ञान लेखकों का विशेष उत्तरदायित्व है कि जनसंख्या की शून्य वृद्धि तथा प्रदूषण को अल्पतम करने में अपना योगदान दें।

सारणी 5

जल प्रदूषक उद्योग

उद्योग	संख्या	उद्योग	संख्या
1. चीनी	292	14. खाद्य-तेल और वनस्पति	287
2. ऐलकोहल	115	15. कृत्रिम रंग	28
3. कास्टिक सोडा	33	16. लोह और अलोह	113
4. उर्वरक	86	17. चर्म	143
5. तेल छेदन व शोधन	19	18. अकार्बनिक रसायन	319
6. कृत्रिम धागे	28	19. सीमेन्ट	107
7. समस्त कपड़ा	968	20. खान	5097
8. कागज और लुगदी	189	21. रबर और उसके उत्पाद	209
9. औषधि	288	22. खाद्य और फल	109
10. कीटनाशक	61	23. आयरन और स्टील	525
11. पेट्रो एवं कार्बनिक रसायन	214	24. ढलाई कारखाना	609
12. दुग्ध उत्पाद	107	25. वाहन डिपो और गैरेज	800
13. ताप ऊर्जा संयंत्र	123	26. आणविक	35

सारणी 6

वायु प्रदूषक उद्योग

उद्योग	संख्या	उद्योग	संख्या
1. चीनी	292	12. कृत्रिम रंग	28
2. ऐलकोहल	115	13. लोह और अलोह	113
3. उर्वरक	76	14. चर्म	143
4. तेल शोधक	19	15. अकार्बनिक रसायन	319
5. कृत्रिम धागे	28	16. सीमेन्ट	107
6. कपड़ा	968	17. खान	5097
7. कागज और लुगदी	189	18. खाद्य और फल	109
8. कीटनाशक	61	19. आयरन और स्टील	525
9 पेट्रो-रसायन	214	20. ढलाई कारखाना	609
10. ताप-ऊर्जा संयंत्र	123	21. वाहन डिपो और गैरेज	800
11. खाद्य तेल और वनस्पति	287	22. आणविक	35.

Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

स्तनी कोशिकाओं से रसायन उत्पादन

अल्पना शर्मा, अदिति सरकार, सत्येन्द्र कुमार तथा सिद्धनाथ उपाध्याय
जैव रासायनिक इन्जीनियरी, प्रौद्योगिकी संस्थान,
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

[प्राप्त—नवम्बर 4, 1991]

सारांश

चिकित्सा एवं रोग निदान हेतु प्रयोग में लाये जाने वाले प्रमुख उत्पादों जैसे ऊतक प्लास्मिनोजेन उद्दीपक, प्रोयूरोकाइवेज, इरिथ्रोपोएटिन, मोनोक्लोनल ऐन्टीबाडी, लिम्फोकाइन तथा इन्टरफेरान का उत्पादन स्तनी एवं अन्य समान बहुन्यष्टिवर्णि कोशिकाओं द्वारा अब सम्भव हो गया है। स्तनी कोशा संवर्धन के लिए निलम्बित या लांगलन आधारित कोशिका तन्त्र का प्रयोग होता है। स्तनी कोशिकाओं का जीवाणु के स्थान पर विशेष परिस्थितियों में प्रयोग होता है अथवा स्तनी एवं जीवाणु कोशिकाओं का संयोजन या स्तनी कोशिकाओं एवं प्रकिण्व (ईस्ट) का प्रयोग किया जाता है। प्रस्तुत प्रपत्र में उपर्युक्त तन्त्रों के लाभ, हानि एवं सामर्थ्य का संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

Abstract

Chemicals from mammalian cells. *By* Alpana Sharma, Aditi Sarkar, Satendra Kumar and Siddh Nath Upadhyay, School of Biochemical Engineering, Institute of Technology, Banaras Hindu University, Varanasi.

The production of important diagnostic and therapeutic products such as tissue type plasminogen activator, prourokinase, erythropoetin, monoclonal antibodies, lymphokines and interferons has become possible by mammalian cells or other similar eukaryotic cell system. For preparative mammalian cell culture either the suspended or anchorage cell systems are used in a growing or a nongrowing state. The use of mammalian cells in place of bacterial cells or a combination of mammalian cells with bacterial or yeast cell is also being conceived for preparative purposes.

This paper presents a brief review of the advantages, disadvantages and potential of such system.

विगत दशक में जैव प्रौद्योगिकी के व्यापक पैमाने पर उपयोग की दिशा में आशातीत सफलता मिली है। जीवाणुओं की सहायता से कई नए उत्पाद मिलने सम्भव हो सके हैं जो पहले कठिन अथवा असम्भव दिखते थे। आनुवंशिक अभियान्त्रिकी की उल्लेखनीय सफलताओं से भी इस दिशा में शोध को विशेष गति मिली है।

कुछ वर्षों पूर्व तक यही धारणा थी कि जैव प्रौद्योगिकी के माध्यम से नये उत्पाद केवल बैक्टीरिया जैसे जीवाणुओं की सहायता से ही प्राप्त हो सकते हैं किन्तु अब ऐसा लगने लगा है कि पुनर्योगज (रिकाम्बिनेन्ट) डी एन ए प्रौद्योगिकी द्वारा चिकित्सा एवं रोग-निदान हेतु अनेक नये उत्पादों जैसे ऊतक प्लास्मिनोजेन उद्दीपक (टी पी ए, जो थ्राम्बीन के थक्कों को विलेय कर लेते हैं), प्रोयूरोकाइनेज (के पी ए) इरिथ्रोपोएटिन (इ पी ओ, जो कुछ प्रकार की रक्ताल्पता को कम करते हैं), मोनोक्लोनल ऐन्टीबाडी, लिम्फोकाइन तथा इन्टरफेरान आदि का उत्पादन स्तनी एवं अन्य बहुन्यष्टि वर्णि कोशिकाओं द्वारा भी अब सम्भव हो सकेगा (सारणी 1)[1-3]। विशेषज्ञों के आकलन के अनुसार 1992-93 के अन्त तक ऐसे उत्पादों का बाजार काफी बढ़ जाएगा तथा इनका उत्पादन व्यापक पैमाने पर प्रारम्भ हो सकेगा (सारणी 2)।

सारणी 1

स्तनि कोशिका संवर्धन के उत्पाद

- O कृत्रिम त्वचा, तन्त्रिका, शिरा आदि
- O प्रतिरक्षी चिकित्सा के लिए कोशिकाएँ
- O मानव वृद्धि हार्मोन
- O ऊतक प्लास्मिनोजेन उद्दीपक
- O इरिथ्रोपोएटिन O प्रोयूरोकाइनेज O टीके
- O लसीका कोशीय द्रव (लिम्फोकाइन्स) O मोनोक्लोनल ऐन्टीबाडी

सारणी 2

जैव प्रौद्योगिकी उत्पादों का अनुमानित बिक्री मूल्य

उत्पाद	बिक्री करोड़ रुपये में
आर डी एन ए भैषज	5200
प्रतिकार नैदानिक	4600
अन्त:स्थानिक नैदानिक	600
मोनोक्लोनल एन्टीबाडी भैषज	1400
कुल	1180

सारणी 3

कोशिका संवर्धन के लिए आवश्यक कुछ मूलभूत तथ्य

- ⊙ कोशिकाएं ⊙ पोषक मीडिया ⊙ उत्पाद
- ⊙ परीक्षण—मूल्यांकन का तरीका ⊙ समय
- ⊙ विश्वसनीयता ⊙ सुगम पृथक्कीकरण
- ⊙ जैवीय पदार्थ का एकत्रीकरण ⊙ उत्पादों का शुद्धीकरण
- ⊙ विसरण नियन्त्रित सक्रियता आदि

जैव प्रौद्योगिकी द्वारा प्राप्त उत्पादों का उत्पादन कुछ मूलभूत तथ्यों पर आधारित होता है। इन सभी तथ्यों के सही प्रयोग तथा अन्तःक्रियाओं के सम्मिश्रण से आवश्यक उत्पाद शुद्ध अवस्था में प्राप्त हो सकते हैं (सारणी 3)।

स्तनी कोशिकाओं को जीवाणुओं के स्थान पर प्रयोग कर सकते हैं अथवा स्तनी एवं जीवाणु कोशिकाओं का संयोजन अथवा स्तनी कोशिकाओं एवं प्रकिण्व (ईस्ट) का संयोजन तन्त्र भी विभिन्न उत्पादों के उत्पादन के लिए उपयोग में लाए जाते हैं। लेकिन प्रत्येक तन्त्र के लिए विशेष परिस्थितियों की आवश्यकता होती है।

स्तनी कोशिकाएँ केवल उन्हीं दशाओं में जीवाणु कोशिकाओं की जगह प्रयोग की जाती हैं जहाँ अपेक्षाकृत सुगम एवं सस्ता जीवाणु सम्प्रेषण (एक्सप्रेशन) सम्भव नहीं है। बड़े प्रोटीन अणु (अणु भार 20,000) जिनमें एक से अधिक डाइसलफाइड बन्ध होते हैं, जीवाणु से निकलने के पश्चात् पुनः सक्रिय अवस्था में बड़ी मुश्किल से आ पाते हैं। जीवाणु बहुत से अत्यावश्यक रूपान्तरणों को करने में भी सक्षम नहीं होते हैं—जैसे संकेतिक क्रम का हटाया जाना अथवा बहु उपएकक वाली शर्कराओं (ग्लाइकोसिलेशन) का प्रवेश सक्रिय प्रोटीन में कराना जीवाणुओं के लिए सम्भव नहीं। स्तनी कोशिकाएँ ये सभी कार्य अपेक्षाकृत सुगमतापूर्वक कर सकती हैं तथा साथ ही अनेक परवर्ती स्थानान्तरण (पोस्ट-ट्रान्सलेशनल) परिवर्तन भी कर सकती हैं (सारणी 4)।

सारणी 4

जीवाणु कोशिकाओं के स्थान पर स्तनी कोशिकाओं का प्रयोग

- जीवाणु द्वारा न कर सकने योग्य कार्यों को करने में सक्षम
- उचित/सही वलन
- सुगम कर्तन
- ग्लाइकोसिलेशन (शर्करा का प्रवेश)
- गामा कार्बोक्सीलेशन
- उपएकक संयोजन

औषधि अथवा रोग निदान हेतु प्रयोग में आने वाले एन्जाइमों को सक्रिय रखने के लिए उचित संरचना तथा दूसरे रासायनिक परिवर्तनों की आवश्यकता पड़ती है—जैसे सक्रियता, उचित औषधीय व्यवहार विशिष्टता एवं सामान्य प्रतिरोधी अनुक्रिया। एन्जाइमों को अधिक सक्षम बनाने के लिए शर्करा का प्रवेश, उचित डाइसलफाइड बन्धों का निर्माण, कर्तन द्वारा संयोजन एवं रूपान्तरण और अन्य उत्तर

स्थानान्तरण रूपान्तरणों की आवश्यकता पड़ती हैं। जीवाणु ये सब क्रियाएँ एवं रूपान्तरण नहीं कर सकते, जबकि स्तनी कोशिकाएँ एवं अन्य बहुन्यष्टिवर्णि कोशिकाएँ कर सकती हैं। साथ ही इनके उत्पाद घुलनशील एवं अणुओं के रूप में होते हैं।

छोटे प्रोटीनों में जहाँ एक या दो डाइसल्फाइड बन्ध होते हैं तथा विशेष संरचना की आवश्यकता नहीं होती वहाँ स्तनी एवं जीवाणु कोशिकाओं के संयोजन के पश्चात् जैव परिवर्तन अति श्रेष्ठ माना गया है (चित्र 1)।
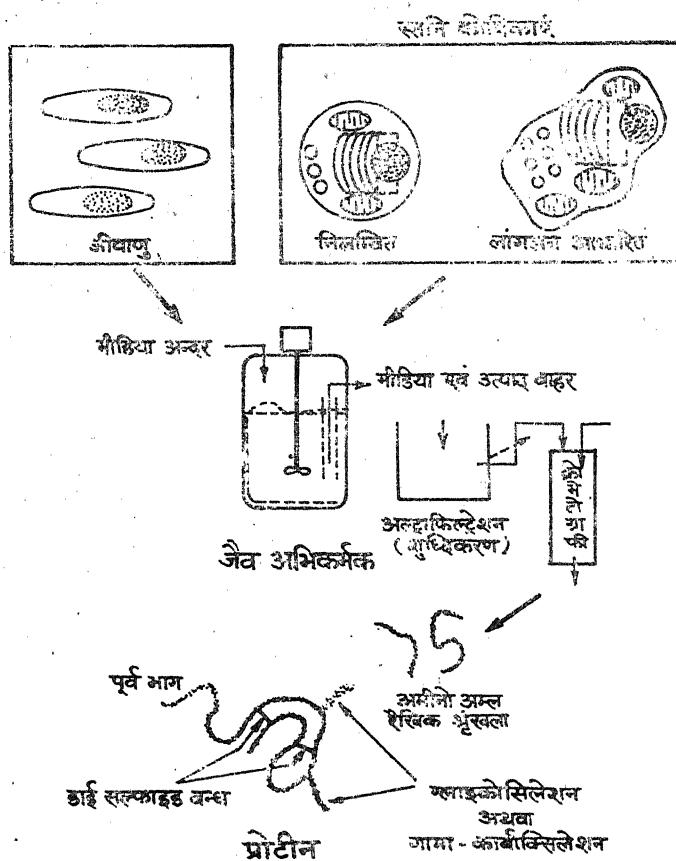
चित्र 1 जीवाणुओं के प्रयोग से प्राप्त रिकाम्बिनेन्ट उत्पाद तन्त्र

स्तनी कोशिकाएँ एवं प्रकिण्व (ईस्ट) के संयोजन से प्राप्त उत्पाद अधिकतर कोशिका-स्वतन्त्र (कोशिका फ्री) माध्यम में रहता है जिसके कारण शुद्धिकरण बहुत सरल होता है। इसी विशेषता के कारण ग्लाइकोसिलेटीकृत सक्रिय एन्जाइमों के स्राव के लिए प्रकिण्व का विकास किया जा रहा है। ये सफलताएँ स्तनी कोशिका संवर्धन के स्थापन के लिए अति महत्वपूर्ण है जिसमें बड़ी मात्रा में उत्पादन व उत्पादन दर प्रति कोशिका अधिक होती है।

उत्पादन तकनीक

किसी भी उत्पादन तन्त्र को चुनने के लिए उसके संवर्धन की दशा तथा उत्पाद निर्माण में गतिकी को अनुकूलतम बनाना होता है। अन्त में जैव अभिकर्मक के प्रकार का चुनाव किया जाता है।

दूसरी ओर प्रारम्भिक स्तनी कोशिका संवर्धन के लिए मोनोक्लोनल ऐन्टीबाडी मुख्य आधार हैं। इनको सफेद चुहियों (एलबिनो माइस) में पैदा किया जाता है। इसके बाद इन एन्टीबाडीज को एलिसा तकनीक द्वारा शुद्ध किया जाता है। वास्तव में चिकित्सा एवं रोग निदान हेतु प्रोटीन औषधियों का उत्पादन मूल्य सुनिश्चित होने के बाद ही इनको बाजार में बेचा जा सकता है।

(क) स्तनी कोशिका संवर्धन

किसी भी प्रकार के कोशिका संवर्धन के लिए संवर्धन माध्यम एवं जैव अभिकर्मक की आवश्यकता होती है। इसमें कोशिकाओं की वृद्धि के लिए सीरम प्रोटीन युक्त (वृद्धि फैक्टर) पोषक यूष (माध्यम) प्रयोग किया जाता है। इस माध्यम को एक जैव अभिकर्मक में डालते हैं जिसका ताप, पीएच व जीवाणु-हनन-क्षमता को स्थिर तथा निश्चित किया जाता है। कोशिका की उपलब्धि मुख्यतः माध्यम की रचना एवं उसमें उपस्थित अवयवों पर निर्भर करती है, जैसे—शर्करा की मात्रा बढ़ाने से प्रोटीन उत्पाद में ग्लाइकोसिलेशन का होना आदि।

(ख) जैव अभिकर्मकों का विवरण

कोशीय संवर्धन के लिए मुख्यतः चार प्रकार के अभिकर्मक काम में लाये जा सकते हैं :

(1) बैच अभिकर्मक

(2) फैडबैच अभिकर्मक

(3) सतत अभिकर्मक, एवं

(4) परफ्यूजन

किसी भी पोषित अथवा प्रसारक के लिए जिसमें उत्पाद निर्माण के लिए कोशिका प्रचुरोद्भवन (Proliferation) की आवश्यकता होती हैं, बैच/फैडबैच अथवा सतत जैव अभिकर्मकों को प्रयोग में लाया जाता है (चित्र 2) लेकिन उत्पाद के लिए अप्रचुरोद्भवन कोशिकाओं की आवश्यकता होने पर परफ्यूजन जैव अभिकर्मक का प्रयोग श्रेष्ठ होता है। इसमें कोशिकाओं को अभिकर्मक में ही रखते हैं, ताजा माध्यम डालते हैं एवं अवशिष्ट युक्त माध्यम को निकाल दिया जाता है जिससे अवशिष्टों की मात्रा एक तरह से कम अथवा नगण्य ही रहती है।

चित्र 3 में विभिन्न प्रकार के परफ्यूजन जैव अभिकर्मकों को चित्रित किया है। प्रत्येक को या तो लांगलन आधारित या निलम्बित कोशिकाओं के लिए प्रयोग में लाया जाता है। साधारणतया स्तनी

कोशिकाएँ ऊतकों से प्राप्त होती हैं इसलिए इनको ठोस आधार की आवश्यकता होती है जबकि ऊतक में कोशिका-कोशिका का संग्रहण होता है, साथ ही इनको किसी द्रव में रखा जाता है ।
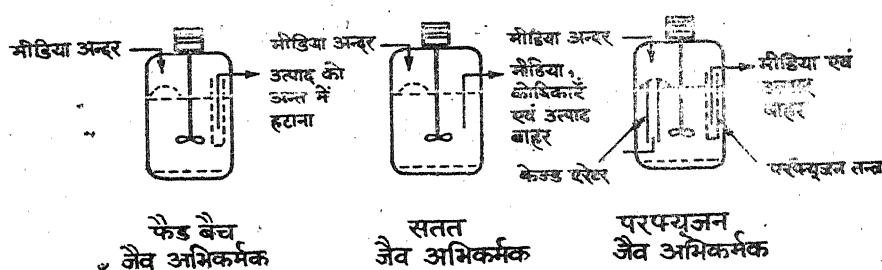
चित्र 2 जैव अभिकर्मकों के विभिन्न प्रक्रम तन्त्र
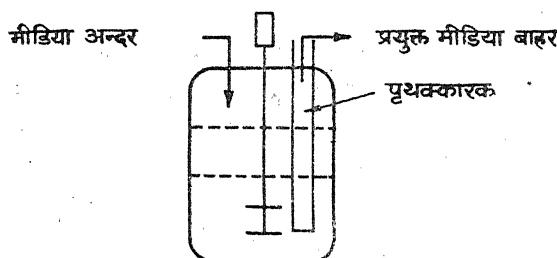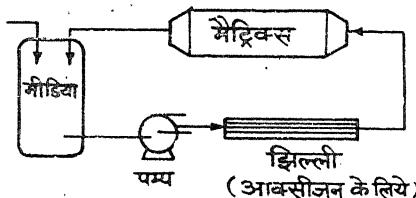
लंगलन आधारित स्तनि कोषिकाओं के लिए ठोस सैरामिक मैट्रिक्स आधार

चित्र 3 स्तनी कोष परफ्यूजन जैव अभिक्रमंक

किसी भी अभिकर्मक का चयन कुछ आवश्यक तथ्यों पर निर्भर करता है—जैसे कोशिकाओं के लिए प्राकृतिक वायुमण्डल, पोषक तत्वों का निर्धारण एवं कोशिकाओं एवं उत्पादों की निकासी एवं आक्सीजन की आपूर्ति आदि ।

लांगलन आधारित कोशिकाओं के लिए ठोस आधार के लिए गोल सेलूलोसिक या पॉलीमेरिक मनकों अथवा सेरामिक मैट्रिक्सों का प्रयोग कर सकते हैं। सेरामिक मैट्रिक्सों में कोशिकाओं को आक्सीजन की प्राप्ति द्रव माध्यम से होकर गैस पारगम्य झिल्ली द्वारा होती है। यह झिल्ली लघुरन्ध्री पॉलीप्रोपाइलिन की बनी होती है[4]।

निलम्बित स्तनी कोशिकाओं के लिए वायु उत्पादक मिश्रकों (एयर लिफ्टर मिक्सर) का इस्तेमाल कर सकते हैं। इसमें अपरूपण या कर्तन (Shear) कम होता है लेकिन इन कोशिकाओं के लिए पिंजरनुमा वातित्र (एरेटर) सर्वोत्तम होगा जो एक स्टेनलेस स्टील जाली का सादा सिलिंडर होता है जिसमें माध्यम एवं घुलित वायु (आक्सीजन) आसानी से गुजर जाती है। इसकी जाली के रन्ध्रों की माप 5 माइक्रान होती है। स्तनी कोशिकाओं की वृद्धि के लिए मानक आक्सीजन की आवश्यकता होती है।

इस प्रकार स्तनी कोशिका संवर्धन द्वारा विभिन्न उत्पादों को प्राप्त कर सकते हैं। इससे प्राप्त उत्पादों का मूल्य अधिक होता है क्योंकि इसके पोषक माध्यम में सीरम प्रोटीन को वृद्धि फैक्टर की तरह इस्तेमाल किया जाता है जिसका मूल्य काफी होता है—जैसे इन्सूलिन, सेलिनियम, ट्रांसफैरिन आदि। स्तनी कोशिका वृद्धि मुख्यतः इन्हीं पर आधारित होती है। यदि हम इन सीरम प्रोटीन वृद्धि फैक्टरों का विकल्प खोज सकेंगे तो स्तनी कोशिका संवर्धन जैव प्रौद्योगिकी के मुख्य उत्पादों को प्राप्त करने की सर्वोत्तम विधि सिद्ध हो सकती है।

निर्देश

1. बोफे, एस० ए०, Biotechnology : The Biological Principles, 1987, p. 111-152.

2. ग्रे, पी० डब्लू०, अग्रवाल, बी० बी०, बेन्टेन, सी० वी०, ब्रिगमैन, टी० एस०, पैलाडिनों, एम० ए० तथा नैडविन, जी० ई०, Nature, 1984, 132, 721-724.

3. पैनिका, डी०, नैडविन, जी० ई०, हेफिलिक, जे० एस०, सीवर्ग, पी० एच०, अग्रवाल, बी० बी० तथा ग्रोएडेल, डी० वी०, Nature, 1984, 132, 724-729.

4. स्वार्ट्ज, आर० डब्लू०, The Impact of Chemistry on Biotechnology, 1987, p. 102-120.

Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

एकविमीय श्राडिगर समीकरण का हल

एस० डी० बाजपेयी

गणित विभाग, बहरेन विश्वविद्यालय, ईसा टॉउन, बहरेन

तथा

साधना मिश्र

विद्या भवन रूरल इंस्टीट्यूट, उदयपुर

[प्राप्त—नवम्बर 13, 1991]

सारांश

इस प्रपत्र में एकविमीय श्राडिगर समीकरण का हल प्रस्तुत किया रहा है। इसमें यह भी दिखाया गया है कि हमारे श्राडिगर समीकरण के हल से उष्मा चालन के एक समीकरण का हल निकल आता है।

Abstract

Solution of a one-dimensional Schrodinger equation. *By* S. D. Bajpai, Department of Mathematics, University of Bahrain, P. O. Box 32038, Isa Town, Bahrain and Sadhana Mishra, Vidya Bhawan Rural Institute, Udaipur (India).

In this paper, we present a solution of a one-dimensional Schrodinger equation. We further show that the solution of our Schrodinger equation leads to a solution of an equation of heat conduction.

1. प्रस्तावना

क्वांटम यान्त्रिकी में विभवों के विभिन्न रूपों के लिए श्राडिगर समीकरणों के हल निकालना एक मूलभूत समस्या है।

प्रस्तुत प्रपत्र का उद्देश्य एकविमीय काल-आधारित श्राडिंगर समीकरण के लिए हल प्राप्त करना है। इस समीकरण में चेबीशेव बहुपद निहित हैं। हम यह भी प्रदर्शित करेंगे कि हमारे एकविमीय काल-आधारित श्राडिंगर समीकरण से उष्मा चालन के एक समीकरण का हल प्राप्त होता है।

2. विशिष्ट श्राडिंगर समीकरण का सूत्रीकरण

समीकरण [6, p. 16, (2.10)]

$$ih\frac{\partial\psi}{\partial t}=-\frac{h^2}{2m}\frac{\partial^2\psi}{\partial x^2}+V\psi \tag{2.1}$$

एकविमीय काल-आश्रित श्राडिंगर समीकरण के नाम से ज्ञात है।

हम एक कण पर विभव $V(x)$ में विचार करें जो

$$V=0,\ -\infty<x<\infty. \tag{2.2}$$

द्वारा दिया जाता है जिससे श्राडिंगर समीकरण निम्नवत् हो जाता है

$$\frac{\partial\psi}{\partial t}=k\frac{\partial^2\psi}{\partial x^2},\ (-\infty<x<\infty) \tag{2.3}$$

जहाँ

$$k=-\frac{h}{2im}.$$

हल ψ से निम्नलिखित प्रारम्भिक प्रतिबन्ध की तुष्टि होनी चाहिए :

$$\psi(x,0)=\left(\frac{x}{\sqrt{(2k)}}\right)^n. \tag{2.4}$$

3. विशिष्ट श्राडिंगर समीकरण का हल

जिस प्रमेय का हल प्राप्त किया जाना है वह है

$$\psi(x,t)=t^{n/2}\,He_n\left(\frac{x}{\sqrt{(2kt)}}\right), \tag{3.1}$$

जहाँ $He_n(x)$ चेबीशेव हर्माइट बहुपद [4, pp. 166-168] हैं।

उपपत्ति : माना कि (2.3) के हल का स्वरूप निम्नवत् है

$$\psi(x, t)=t^{n/2} f\left[\frac{x}{\sqrt{2(kt)}}\right]. \tag{3.2}$$

(2.3) में (3.2) प्रतिस्थापित करने से निम्नखित (3.2) अवकल समीकरण प्राप्त होता हैं—

$$f''\left[\frac{x}{\sqrt{(2\,kt)}}\right]+\frac{x}{\sqrt{(2\,kt)}}f'\left[\frac{x}{\sqrt{(2\,kt)}}\right]-nf\left[\frac{x}{\sqrt{(2\,kt)}}\right]=0. \tag{3.3}$$

अब यह स्पष्ट है कि व्यंजक (3.2) से (2.3) की तुष्टि हो जाती है यदि

$$f(z)\equiv f\left[\frac{x}{\sqrt{(2\,kt)}}\right]$$

हल हो अवकल समीकरण

$$\frac{d^2f}{dz^2}+z\frac{df}{dz}-nf=0, \tag{3.4}$$

का जो कि चेबीशेव हर्माइट समोकरण [4, p. 168, (8. 27)] है जिसका हल

$$f(z)=He_n(z).$$

इसलिए हल (3.2) का स्वरूप (3.1) हो जाता है।

4. प्रारम्भिक प्रतिबन्ध की पुष्टि

सम्बन्ध [1, p. 323, (10.9)] तथा $He_n(x)=2^{-n/2}H_n\left(\frac{x}{\sqrt{2}}\right)$,

का प्रयोग करने पर हल (3.1)

$$\psi(x, t)=\left(\frac{t}{2}\right)^{n/2}\left(\frac{x}{\sqrt{(kt)}}\right)^n {}_2F_0\left[\frac{n}{2},\ \frac{1-n}{2};-;-\frac{4kt}{x^2}\right]$$

$$=\left(\frac{x}{\sqrt{(2k)}}\right)^n {}_2F_0\left[-\frac{n}{2},\ \frac{1-n}{2};-;-\frac{4kt}{x^2}\right]. \tag{4.1}$$

अतएव

$$\psi(x, 0)=\left(\frac{x}{\sqrt{(2k)}}\right)^n \tag{4.2}$$

5. अध्यारोपण का सिद्धान्त तथा सामान्य हल

अध्यारोपण के सिद्धान्त तथा (3·1) को दृष्टि में रखते हुए, (2·3) का सामान्य हल

$$u(x, t)=\sum_{n=0}^{\infty} C_n\, t^{n/2}\, He_n(x/\sqrt{(2kt)}), \tag{5.1}$$

द्वारा दिया जाता है बशर्ते

$$\psi(x, 1)=u(x).$$

(5·1) में $t=1$ रखने पर

$$u(x)=\sum_{n=0}^{\infty} C_n\, He_n(x/\sqrt{(2k)}). \tag{5.2}$$

(5.2) में दोनों पक्षों में

$$e^{-x^2/4k}\, He_n\left(\frac{x}{\sqrt{(2k)}}\right)$$

से गुणा करने तथा x के प्रति $-\infty$ से ∞ तक समाकलित करने एवं हर्माइट बहुपदों के लाम्बिकता गुणधर्म [4, p. 168, (6.28)] का प्रयोग करने पर

$$C_n=\frac{1}{2\sqrt{(k\pi)}n!}\int_{-\infty}^{\infty} u(x)\, e^{-x^2/4k}\, He_n\left(\frac{x}{\sqrt{(2k)}}\right) dx. \tag{5.2}$$

प्रेक्षण : (5·1) के हल से उष्मा प्रवाह के समीकरण [2, p. 50, (1)] का भी हल निकल आता है।

टिप्पणी 1 : अगले प्रपत्र में हम (.51) की विशिष्ट दशाओं को फाक्स के H-फलन के पदों में प्रस्तुत करेंगे।

H-फलन की महत्ता विशेषतया सम्प्रयुक्त गणित, भौतिक विज्ञानों तथा सांख्यिकी में H-संकेत द्वारा अभिव्यक्ति के कारण है [5, pp. 145-159] अतएव (5·1) के विशेष हल से माइजर फलन सार्वीकृत हाइपरज्यामितीय फलन, बेसेल फसल आदि के लिए उनके हल प्राप्त किए जा सकते हैं।

टिप्पणी 2 : (2·3) जैसा तीनविमीय श्राडिंगर समीकरण सरलता से प्राप्त किया जा सकता है जिसका इल (3.1) तथा (5.1) से निकल आवेगा।

निर्देश

1. ऐंड्रूज, एल० सी०, Special Functions for Engineers and Applied Mathematicians. Macmillan Publishing Co., New York, 1985.
2. कार्सला, एच० एस० तथा जीगर, जे०सी०, Conduction of Heat in Solids द्वितीय संस्करण Clarendon Press, Oxford, 1986.
3. फाक्स, सी०, Trans. Amer. Math. Soc., 1961, 98, 395-429.
4. केण्डाल, एम० तथा स्टुअर्ट, ए०, The Advanced Theory of Statistics भाग 1 (चतुर्थ संस्करण) Charles Griffin & Co. Ltd., London, 1977.
5. मथाई, ए० एम० तथा सक्सेना, आर० के०, The H-function with applications in Statistics and other Disciplines. Wiley Eastern Ltd., नई दिल्ली, 1978.
6. राई, ए० एम० आई०, Quantum Mechanics. McGraw-Hill Book Co., London, 1981.

VijnanaParishad Anusandhan Patrika, Vol. 35. No. 1, 1992

समुच्चयों के मध्य अर्धसंबद्धता

के० के० दुबे तथा आर० के० तिवारी
गणित तथा सांख्यिकी विभाग
डा० हरी सिंह गौड़ यूनिवर्सिटी सागर, (म० प्र०)

[प्राप्त—मई 31, 1990]

सारांश

कोई द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) अपने उपसमुच्चयों A तथा B के मध्य अर्धसंबद्ध कहा जाता है यदि X में ऐसा कोई अर्ध संविवृत समुच्चय F नहीं रहता जिससे $A \subset F$ तथा $F \cap B = \phi$ । यह दिखलाया गया है कि द्विसांस्थितिक समष्टि अर्धसंबद्ध होता है यदि यह अपने अरिक्त उपसमुच्चयों के बीच के प्रत्येक युग्म से अर्धसंबद्ध रहता है ।

Abstract

Quasi-connectedness between sets. *By* K. K. Dube and R. K. Tiwari, Department of Mathematics and Statistics, Dr. H. S. Gour University, Sagar (M. P.)

The introduced notion of quasi-connectedness is seen to be derived as a localised version of the requirement of the quasi-connectedness of the whole space. A bitopological space (X, P, Q) is said to be quasi-connected between its subsets A and B if there exists no quasi-clopen set F in X such that $A \subset F$ and $F \cap B = \phi$. It is shown that a bitopological space is quasi-connected if it is quasi-connected between every pair of its nonempty subsets. This concept is found to be stronger than that of pairwise-connectedness between sets.

कोई सांस्थितिक समष्टि (topological space) सम्बद्ध होती है यदि यह अपने अरिक्त उपसमुच्चयों (subsets) के प्रत्येक युग्म के बीच जुड़ी होती है। "समुच्चयों (sets) के बीच सम्बद्धता" की परिभाषा के लिए सन्दर्भ[6] देखना होगा। 1984 में दुबे तथा तिवारी ने[2] अर्धविवृत समुच्चयों की संकल्पना का प्रवेश किया जो समुच्चयों के मध्य सम्बद्धता का अधिक प्रबल वाचन है।

मुखर्जी तथा बनर्जी[7] ने समुच्चयों के बीच सम्बद्धता का सूत्रीकरण समुच्चयों के मध्य युग्मशः सम्बद्धता के रूप में किया है जबकि आर्य तथा नूर[1] ने द्विसांस्थितिक समष्टियों के लिए समुच्चयों के मध्य s-सम्बद्धता को युग्मशः s-सम्बद्धता तक विस्तीर्ण किया। दत्त[4] ने अर्धविवृत समुच्चय प्राप्त किये हैं। दुबे इत्यादि ने[3] अर्ध समुच्चय सम्बद्ध चित्रणों का अध्ययन किया है।

द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) का अर्थ है अरिक्त समुच्चय X जो P तथा Q दो संस्थितियों से युक्त है। द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) का एक उपसमुच्चय अर्धविवृत कहलाता है यदि प्रत्येक $x \in A$ या तो A का P-आन्तरिक या Q-आन्तरिक विन्दु हो। इसी तरह समान रूप से A अर्धविवृत होता है यदि $A = U \cup V$ किसी P-विवृत समुच्चय U तथा Q-विवृत समुच्चय V के लिए[4]। प्रत्येक P-विवृत (क्रमशः Q-विवृत) समुच्चय अर्धविवृत है किन्तु इसका विलोम नहीं है। अर्धविवृत समुच्चयों का कोई भी संमेल अर्धविवृत है। कोई समुच्चय अर्धसंवृत होता है यदि इसका पूरक अर्धविवृत हो। प्रत्येक P-संवृत (क्रमशः Q-संवृत) समुच्चय अर्धसंवृत है।[4] समस्त अर्धसंवृत समुच्चयों का प्रतिच्छेदन, जिसमें समुच्चय A रहता A का अर्ध संवृतन कहलाता है और $qcl\ A$ द्वारा अंकित किया जाता है।[4] अर्धसंवृत समुच्चयों का प्रतिच्छेदन अर्धसंवृत होता है अतः $qcl\ A$ अर्धसंवृत है। कोई समुच्चय A अर्धसंवृत होता है यदि और केवल यदि $A = qcl\ A$[5]।

समुच्चयों के मध्य सम्बद्धता कल्प

द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) में उपसमुच्चय F को (P, Q)-संविवृत (clopen) कहा जाता है यदि F P-संवृत और Q-विवृत हो।

द्वि संविवृत (biclopen) समुच्चय का अर्थ होगा ऐसा समुच्चय जो (P, Q)-संविवृत तथा (Q, P)-संविवृत हो।

परिभाषा 1.1[7] : द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) को इसके अरिक्त उपसमुच्चयों A तथा B के मध्य (P, Q)-सम्बद्ध ((Q, P)-सम्बद्ध) कहा जाता है यदि X में कोई ऐसा (P, Q)-संविवृत ((Q, P) संविवृत) समुच्चय F नहीं होता जिससे कि $A \subset F \subset X - B$.

यही नहीं, द्विसांस्थितिक समष्टि X को A तथा B के मध्य युग्मशः सम्बद्ध कहा जाता है यदि यह A तथा B के बीच (P, Q)-सम्बद्ध तथा साथ ही (Q, P)-सम्बद्ध हो।

परिभाषा 1.2 : द्विसांस्थितिक समष्टि में कोई समुच्चय अर्ध संविवृत कहा जाता है यदि यह अर्धविवृत तथा साथ अर्धसंवृत हो।

परिभाषा 1.3 : कोई द्विसांस्थितिक समष्टि अपने उपसमुच्चयों A तथा B के मध्य अर्धसम्बद्ध कही जाती है यदि किसी ऐसे अर्धसंविवृत समुच्चय F का अस्तित्व नहीं होता जिससे $A \subset F$ तथा $F \cap B - \phi$.

स्पष्ट है कि प्रत्येक (P, Q)-संविवृत समुच्चय संविवृत कल्प है। इसका विलोम निम्नलिखित उदाहरण से नहीं देखा जा सकता।

उदाहरण 1.1 : माना $X=\{a, b, c\}$, $P=\{\phi, \{a\}, \{b\}, \{a, b\}, X\}$ तथा $Q=\{\phi, \{c\}, X\}$ तो द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) में समुच्चय $\{a\}$ संविवृत कल्प है लेकिन यह न तो (P, Q)-संविवृत है न (Q, P)-संविवृत।

स्मरण करें कि संविवृत समुच्चय कल्प का पूरक पुनः संविवृत कल्प है। फलस्वरूप समुच्चयों के मध्य सम्बद्धता कल्प एक संमितीय सम्बन्ध के रूप में प्रतिबिम्बित होता है। इस अर्थ में कि यदि द्विसांस्थितिक समष्टि A तथा B समुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध होता है तो यह B तथा A के बीच भी अर्धसम्बद्ध होता है।

स्पष्ट है कि अरिक्त समुच्चयों के युग्म हेतु समुच्चयों के मध्य संबद्धताकल्प सार्थक होता है। वस्तुतः यदि कोई द्विसांस्थितिक समष्टि X अपने उपसमुच्चयों A तथा B के बीच अर्धसम्बद्ध रहता है तो $A\neq\phi\neq B$ किन्तु दूसरी ओर यदि $A\cap B\neq\phi$ तो द्विसांस्थितिक समष्टि X अर्धसम्बद्ध होता है A तथा B के बीच। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि प्रतिबन्ध $A\cap B\neq\phi$ द्विसांस्थितिक समष्टि X के लिए आवश्यक नहीं कि A तथा B समुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध हो। इसे निम्नलिखित उदाहरण से देखा जा सकता है :

उदाहरण 1.2 : माना $X=\{a, b, c\}$, $P=\{\phi, \{a\}, \{b\}, \{a, b\}, X\}$ तथा $Q=\{\phi, \{a, c\}, X\}$। यहाँ द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) असंयुक्त समुच्चयों $\{a, b\}$ तथा $\{c\}$ के बीच अर्धसम्बद्ध है।

प्रमेय 1·1 : यदि समष्टि (X, P, Q) अपने उपसमुच्चयों A तथा B के मध्य अर्धसम्बद्ध हो तो यह A तथा B के मध्य युग्मशः सम्बद्ध है।

उपपत्ति : कल्पना कीजिए कि X अपने समुच्चयों A तथा B के मध्य युग्मशः सम्बद्ध नहीं है। तो कोई ऐसा (P, Q)-संविवृत उपसमुच्चय F होता है जिससे कि $A\subset F$ तथा $F\cap B=\phi$। चूंकि प्रत्येक (P, Q)-संविवृत समुच्चय अर्धसंविवृत है अतः इससे यही निकलता है कि (X, P, Q) A तथा B उपसमुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है।

टिप्पणी 1.1 : द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) जो अपने उपसमुच्चयों A तथा B के मध्य युग्मशः सम्बद्ध है वह A तथा B समुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध होने में विफल हो सकता है। क्योंकि उदाहरण 1.1 में समष्टि (X, P, Q) युग्मशः सम्बद्ध है $\{a\}$ तथा $\{b\}$ समुच्चयों के बीच किन्तु इन समुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है।

प्रमेय 1.2 : यदि (X, P, Q) उपसमुच्चय A तथा B के मध्य अर्धसम्बद्ध हो तथा यदि उपसमुच्चय A_1 तथा B_1 ऐसे होंकि $A\subset A_1$ एवं $B\subset B_1$, तो समष्टि A_1 तथा B_1 के मध्य अर्धसम्बद्ध है।

उपपत्ति : मान लीजिए कि X अर्धसम्बद्ध नहीं है A_1 तथा B_1 के बीच । तब X का कोई
संविवृत उपसमुच्चय F ऐसा है कि $A_1 \subset F$ तथा $B_1 \cap F=\phi$ फलस्वरूप X अर्धसम्बद्ध नहीं है A
B के मध्य ।

प्रमेय 1.3 : समष्टि (X, P, Q) A तथा B के मध्य अर्धसम्बद्ध होता है यदि यह $qcl\ A$
$qcl\ B$ के मध्य अर्धसम्बद्ध हो ।

उपपत्ति : केवल यदि : प्रमेय 1.2 से स्पष्ट है

यदि : माना X अर्धसम्बद्ध नहीं है समुच्चय A तथा B के बीच । तब X में कोई अर्धसंवि
समुच्चय F ऐसा है कि $A \subset F$ तथा $B \cap F=\phi$ । चूंकि समुच्चय F अर्धसंवृत है $qcl\ A \subset F$ तथा च
F अर्धविवृत है $qcl\ B \cap F=\phi$ । अतः $qcl\ A$ तथा $qcl\ B$ के मध्य X अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

प्रमेय 1.4 : यदि द्विसांस्थितिक समष्टि X प्राचल A तथा B के मध्य एवं A तथा C प्राचलों
मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है तो समष्टि X A तथा $B \cap C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

उपपत्ति : प्रमेय (1.2) से तुरन्त ही निकलता है कि

द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) जो न तो A तथा B समुच्चयों के मध्य न ही A तथा
समुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध है वह A तथा $B \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध हो सकती है । इसे नीचे दि
गए उदाहरण में देखा जा सकता है ।

उदाहरण 1.3 : मानाकि $X=\{a, b, c\}$, $P=\{X, \phi\ \{a\}, \{b\}, \{a, b\}, \{a, c\}\}$ तथा Q
$\{X, \phi, \{b, c\}\}$, यहाँ समष्टि X न तो $\{c\}$ एवं $\{a\}$ समुच्चयों के बीच, न ही $\{c\}$ एवं $\{b\}$ समुच्च
के बीच अर्धसम्बद्ध है किन्तु $\{c\}$ तथा $\{a, b\}$ के बीच अर्धसम्बद्ध है ।

इस उदाहरण (1.3) में समष्टि $\{c\}$ तथा $\{a\}$ समुच्चयों के मध्य (Q, P)-सम्बद्ध है किन्तु उन
बीच (P, Q)-सम्बद्ध नहीं है । इसका अर्थ यह हुआ कि समष्टि X जो न तो A तथा B समुच्चयों
बीच युग्मशः सम्बद्ध है, न ही A तथा C समुच्चयों के बीच है वह A तथा $B \cup C$ के मध्य अर्धसम्
हो सकता है ।

टिप्पणी 1.2 ; अब भी यह सिद्ध करना शेष है कि द्विसांस्थितिक समष्टि X जो A तथा
समुच्चयों के मध्य न तो (P, Q)-सम्बद्ध हैं न (Q, P)-सम्बद्ध,न ही A तथा B प्राचलों के बीच अर्ध
सम्बद्ध है वह A तथा $B \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

फिर भी हमारे पास निम्नलिखित परिणाम है :

प्रमेय 1.5 : द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) में माना कि A द्विसंविवृत समुच्चय F का उप

समुच्चय है । यदि X A तथा C समुच्चयों के मध्य अर्ध-सम्बद्ध नहीं है तो X A तथा $(X-F) \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

उपर्युक्त प्रमेय की उपपत्ति के लिए निम्नलिखित प्रमेयिका उपयोगी है ।

प्रमेयिका 1.1[5] : एक द्विसांस्थितिक समष्टि X में यदि O द्विविवृत हो और A अर्धविवृत हो तो $O \cap A$ अर्धविवृत है ।

उपपत्ति : चूंकि X समुच्चय A तथा C के बीच अर्धसम्बद्ध नहीं है, और कोई अर्धसंविवृत समुच्चय E रहता है जिससे कि $A \subset E$ तथा $E \cap C = \phi$ । माना कि $H = F \cap E$, F द्विविवृत है अंतः प्रमेयिका 1.1 से H अर्धसंविवृत है । साथ ही H ऐसा है कि $A \subset H$ तथा $H \cap [(X-F) \cup C] = \phi$ । इसलिए X A तथा $(X-F) \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

प्रमेयिका 1.2[5] : समष्टि (X, P, Q) अर्धसम्बद्ध है यदि और केवल यदि X का कोई भी अरिक्त उपयुक्त समुच्चय अर्धविवृत तथा अर्धसंवृत दोनों न हों ।

प्रमेयिका 1.3[5] : प्रत्येक अर्धसम्बद्ध समष्टि युग्मशः सम्बद्ध है किन्तु इसका विलोम सही ही हो ऐसा आवश्यक नहीं है ।

प्रमेय 1.6 : समष्टि (X, P, Q) अर्धसम्बद्ध है यदि और केवल यदि यह इसके अरिक्त उप-समुच्चयों के प्रत्येक युग्म के बीच अर्धसम्बद्ध हो ।

उपपत्ति : माना कि A, B युग्म है X के अरिक्त उपसमुच्चय का । कल्पना किया कि A तथा समुच्चयों के बीच X अर्धसम्बद्ध नहीं है । तब एक X में अर्धसंविवृत उपसमुच्चय है जिससे कि $A \subset F$ तथा $F \cap B = \phi$ । चूंकि A तथा B अरिक्त हैं अतः यह निष्कर्ष निकला कि F अरिक्त सही अर्धसंविवृत उपसमुच्चय है X का । अतएव प्रमेयिका 1.2 के आधार पर X अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

विलोमतः माना कि X अर्धसम्बद्ध नहीं है । तो X में एक अरिक्त सही उपसमुच्चय F रहता है जो कि अर्धविवृत तथा अर्धसंवृत दोनों ही है । फलस्वरूप X F तथा $X-F$ के बीच अर्धसम्बद्ध नहीं है । इस तरह X अपने अरिक्त उपसमुच्चयों के यादृच्छिक युग्म के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है । इस तरह प्रमेय सिद्ध हुआ ।

टिप्पणी 1.3 : यदि समष्टि (X, P, Q) अपने उपसमुच्चयों के युग्म के मध्य अर्धसम्बद्ध हो तो यह आवश्यक नहीं कि यह अपने उपसमुच्चयों के प्रत्येक युग्म के मध्य अर्धसम्बद्ध हो । यथा उदाहरण 1.3 में समष्टि (X, P, Q) समुच्चयों $\{c\}$ तथा $\{a, b\}$ के मध्य अर्धसम्बद्ध है किन्तु $\{c\}$ तथा $\{a\}$ समुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है । यही नहीं समष्टि (X, P, Q) अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

उपपत्ति : मान लीजिए कि X अर्धसम्बद्ध नहीं है A_1 तथा B_1 के बीच । तब X का कोई अर्ध-संविवृत उपसमुच्चय F ऐसा है कि $A_1 \subset F$ तथा $B_1 \cap F = \phi$ फलस्वरूप X अर्धसम्बद्ध नहीं है A तथा B के मध्य ।

प्रमेय 1.3 : समष्टि (X, P, Q) A तथा B के मध्य अर्धसम्बद्ध होता है यदि यह $qcl\ A$ तथा $qcl\ B$ के मध्य अर्धसम्बद्ध हो ।

उपपत्ति : केवल यदि : प्रमेय 1.2 से स्पष्ट है

यदि : माना X अर्धसम्बद्ध नहीं है समुच्चय A तथा B के बीच । तब X में कोई अर्धसंविवृत समुच्चय F ऐसा है कि $A \subset F$ तथा $B \cap F = \phi$ । चूंकि समुच्चय F अर्धसंवृत है $qcl\ A \subset F$ तथा चूंकि F अर्धविवृत है $qcl\ B \cap F = \phi$ । अतः $qcl\ A$ तथा $qcl\ B$ के मध्य X अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

प्रमेय 1.4 : यदि द्विसांस्थितिक समष्टि X प्राचल A तथा B के मध्य एवं A तथा C प्राचलों के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है तो समष्टि X A तथा $B \cap C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

उपपत्ति : प्रमेय (1.2) से तुरन्त ही निकलता है कि

द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) जो न तो A तथा B समुच्चयों के मध्य न ही A तथा C समुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध है वह A तथा $B \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध हो सकती है । इसे नीचे दिए गए उदाहरण में देखा जा सकता है ।

उदाहरण 1.3 : मानाकि $X = \{a, b, c\}$, $P = \{X, \phi\ \{a\}, \{b\}, \{a, b\}, \{a, c\}\}$ तथा $Q = \{X, \phi, \{b, c\}\}$, यहाँ समष्टि X न तो $\{c\}$ एवं $\{a\}$ समुच्चयों के बीच, न ही $\{c\}$ एवं $\{b\}$ समुच्चयों के बीच अर्धसम्बद्ध है किन्तु $\{c\}$ तथा $\{a, b\}$ के बीच अर्धसम्बद्ध है ।

इस उदाहरण (1.3) में समष्टि $\{c\}$ तथा $\{a\}$ समुच्चयों के मध्य (Q, P)-सम्बद्ध है किन्तु उनके बीच (P, Q)-सम्बद्ध नहीं है । इसका अर्थ यह हुआ कि समष्टि X जो न तो A तथा B समुच्चयों के बीच युग्मशः सम्बद्ध है, न ही A तथा C समुच्चयों के बीच है वह A तथा $B \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध हो सकता है ।

टिप्पणी 1.2 ; अब भी यह सिद्ध करना शेष है कि द्विसांस्थितिक समष्टि X जो A तथा B समुच्चयों के मध्य न तो (P, Q)-सम्बद्ध हैं न (Q, P)-सम्बद्ध,न ही A तथा B प्राचलों के बीच अर्ध-सम्बद्ध है वह A तथा $B \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है ।

फिर भी हमारे पास निम्नलिखित परिणाम है :

प्रमेय 1.5 : द्विसांस्थितिक समष्टि (X, P, Q) में माना कि A द्विसंविवृत समुच्चय F का उप-

समुच्चय है। यदि X A तथा C समुच्चयों के मध्य अर्ध-सम्बद्ध नहीं है तो X A तथा $(X-F) \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है।

उपर्युक्त प्रमेय की उपपत्ति के लिए निम्नलिखित प्रमेयिका उपयोगी है।

प्रमेयिका 1.1[5] : एक द्विसांस्थितिक समष्टि X में यदि O द्विविवृत हो और A अर्धविवृत हो तो $O \cap A$ अर्धविवृत है।

उपपत्ति : चूंकि X समुच्चय A तथा C के बीच अर्धसम्बद्ध नहीं है, और कोई अर्धसंविवृत समुच्चय E रहता है जिससे कि $A \subset E$ तथा $E \cap C = \phi$। माना कि $H = F \cap E$, F द्विविवृत है अतः प्रमेयिका 1·1 से H अर्धसंविवृत है। साथ ही H ऐसा है कि $A \subset H$ तथा $H \cap [(X-F) \cup C] = \phi$। इसलिए X A तथा $(X-F) \cup C$ के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है।

प्रमेयिका 1.2[5] : समष्टि (X, P, Q) अर्धसम्बद्ध है यदि और केवल यदि X का कोई भी अरिक्त उपयुक्त समुच्चय अर्धविवृत तथा अर्धसंवृत दोनों न हों।

प्रमेयिका 1·3[5] : प्रत्येक अर्धसम्बद्ध समष्टि युग्मशः सम्बद्ध है किन्तु इसका विलोम सही ही हो ऐसा आवश्यक नहीं है।

प्रमेय 1·6 : समष्टि (X, P, Q) अर्धसम्बद्ध है यदि और केवल यदि यह इसके अरिक्त उप-समुच्चयों के प्रत्येक युग्म के बीच अर्धसम्बद्ध हो।

उपपत्ति : माना कि A, B युग्म है X के अरिक्त उपसमुच्चय का। कल्पना किया कि A तथा समुच्चयों के बीच X अर्धसम्बद्ध नहीं है। तब एक X में अर्धसंविवृत उपसमुच्चय है जिससे कि $A \subset F$ तथा $F \cap B = \phi$। चूंकि A तथा B अरिक्त हैं अतः यह निष्कर्ष निकला कि F अरिक्त सही अर्धसंविवृत उपसमुच्चय है X का। अतएव प्रमेयिका 1.2 के आधार पर X अर्धसम्बद्ध नहीं है।

विलोमतः माना कि X अर्धसम्बद्ध नहीं है। तो X में एक अरिक्त सही उपसमुच्चय F रहता है जो कि अर्धविवृत तथा अर्धसंवृत दोनों ही है। फलस्वरूप X F तथा $X-F$ के बीच अर्धसम्बद्ध नहीं है। इस तरह X अपने अरिक्त उपसमुच्चयों के यादृच्छिक युग्म के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है। इस तरह प्रमेय सिद्ध हुआ।

टिप्पणी 1.3 : यदि समष्टि (X, P, Q) अपने उपसमुच्चयों के युग्म के मध्य अर्धसम्बद्ध हो तो यह आवश्यक नहीं कि यह अपने उपसमुच्चयों के प्रत्येक युग्म के मध्य अर्धसम्बद्ध हो। यथा उदाहरण 1.3 में समष्टि (X, P, Q) समुच्चयों $\{c\}$ तथा $\{a, b\}$ के मध्य अर्धसम्बद्ध है किन्तु $\{c\}$ तथा $\{a\}$ समुच्चयों के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है। यही नहीं समष्टि (X, P, Q) अर्धसम्बद्ध नहीं है।

अत: प्रमेय **1.1**, **1.6**, प्रमेयिका 1.3 तथा टिप्पणी 1.1 को देखते हुए हम निम्नलिखित आरेख प्रस्तुत करते हैं।

युग्मशः सम्बद्धता
⇑ ⇓
अर्ध सम्बद्धता युग्मशः सम्बद्धता जो A तथा B समुच्चयों के युग्म के मध्य है।
⇓ ⇑
A तथा B समुच्चयों के युग्म के मध्य अर्धसम्बद्धता
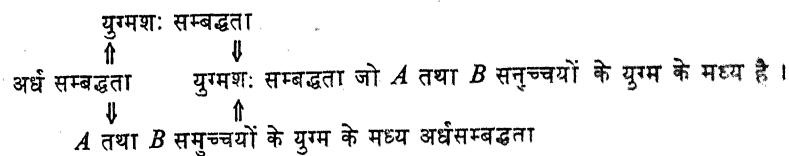
ध्यान देने की बात है कि उपर्युक्त आरेख में A तथा B समुच्चयों के मध्य अर्ध सम्बद्धता का अर्थ A तथा B समुच्चयों के उसी युग्म के मध्य युग्मशः सम्बद्धता ही है।

प्रस्तुत अध्ययन के लिए निम्नलिखित प्रमेयिकाएँ उपयोगी हैं :

प्रमेयिका 1.4[5] **:** माना Y एक द्विविवृत उपसमुच्चय है समष्टि (X, P, Q) का। तब यदि (X, P, Q) का उपसमुच्चय A अर्धविवृत हो X में तो $Y \cap A$ अर्धविवृत है Y में।

प्रमेयिका 1.5 : माना कि Y एक द्विविवृत उपसमुच्चय है समष्टि (X, P, Q) का। तब यदि (X, P, Q) का उपसमुच्चय B अर्धसंविवृत हो X में तो $Y \cap B$ अर्धसंवृत है Y में।

उपपत्ति : चूंकि $B \subset X$ अर्धसंवृत है X में $(X-B)$ अर्धविवृत है X में। अतएव प्रमेयिका 1.4 से $Y \cap (X-B) = Y-(Y \cap B)$ अर्धविवृत है Y में अत: $Y \cap B$ अर्धसंवृत है Y में।

प्रमेयिका 1.6[5] **:** माना कि Y एक द्विविवृत उपसमष्टि है समष्टि (X, P, Q) का। यदि A अर्धविवृत हो Y में तब A अर्धविवृत है X में।

प्रमेयिका 1.7[5] **:** माना कि Y एक द्विसंवृत उपसमष्टि है समष्टि (X, P, Q) का। यदि A अर्धसंवृत हो Y में तो A अर्धसंवृत है X में।

प्रमेय 1.7 : यदि (X, P, Q) का कोई द्विविवृत उपसमुच्चय A तथा B समुच्चयों के मध्य अर्ध सम्बद्ध हो तो समष्टि (X, P, Q) अर्ध सम्बद्ध होता है A तथा B के मध्य।

उपपत्ति : मानाकि (X, P, Q) A तथा B के बीच अर्धसम्बद्ध नहीं है तब X में कोई ऐसा अर्ध संविवृत समुच्चय F है कि $A \subset F$ तथा $F \cap B = \phi$. अत: प्रमेयिका 1.4 तथा 1.5 से $Y \cap F$ अर्धसंविवृत है (Y, P_Y, Q_Y) में जिससे कि $A \subset Y \cap F$ तथा $(Y \cap F) \cap B = \phi$। फलस्वरूप Y अर्धसम्बद्ध नहीं है A तथा B के मध्य। इस विरोध से परिणाम सिद्ध हो जाता है।

विलोम स्थिति में हमें निम्नलिखित परिणाम प्राप्त होगा—

प्रमेय 1.8 : माना कि Y द्विसंविवृत उपसमष्टि है समष्टि (X, P, Q) का। यदि समष्टि X अर्धसम्बद्ध है A तथा B समुच्चयों के बीच (जो Y के उपसमुच्चय है) तो उपसमष्टि Y अर्धसम्बद्ध है A तथा B समुच्चयों के बीच।

उपपत्ति : माना कि Y अर्धसम्बद्ध नहीं है A तथा B उपसमुच्चयों के बीच। तब Y में विद्यमान रहता है कोई ऐसा अर्धसंविवृत उपसमुच्चय F जिससे कि $A \subset F$ तथा $F \cap B = \phi$। चूंकि Y द्विविवृत तथा द्विसंविवृत है X में अतएव प्रमेयिका 1.6 तथा 1.7 से F अर्धसंविवृत उपसमुच्चय है X का जिससे कि $A \subset F$ तथा $F \cap B = \phi$। फलतः X अर्धसंविवृत नहीं है A तथा B के बीच जो कि एक विरोध है।

प्रमेय 1.9 : माना (X, P, Q) एक द्विसांस्थितिक समष्टि है। यदि X अर्धसम्बद्ध नहीं है A तथा B के मध्य तब X का कोई भी द्विविवृत उपसमूह Y, $A \cap Y$ एवं $B \cap Y$ के बीच अर्धसम्बद्ध नहीं हो सकता है।

उपपत्ति : माना कि Y एक द्विविवृत उपसमुच्चय है (X, P, Q) का। चूंकि X A तथा B के मध्य अर्धसम्बद्ध नहीं है अतः X का एक अर्धसंविवृत उपसमुच्चय F विद्यमान है जिससे कि $A \subset F$ तथा $F \cap B = \phi$। इस तरह $A \cap Y \subset F \cap Y$ एवं $(F \cap Y) \cap (B \cap Y) = \phi$।

प्रमेयिका 1.4 तथा 1.5 से $F \cap Y$ अर्ध संविवृत है (Y, P_Y, Q_Y) में अंतः Y अर्थसम्बद्ध नहीं है $A \cap Y$ तथा $B \cap Y$ के मध्य।

कृतज्ञता-ज्ञापन

इस शोधकार्य की अवधि में सी० एस० आई० आर०, नई दिल्ली से जो आर्थिक सहायता मिली, उसके लिए कृतज्ञता ज्ञापित की जा रही है।

निर्देश

1. आर्य, एस० पी० तथा नूर, टी० एम०, Indian J. Pure applied Math. 1987, **18**(7), 597-604.

2. दुबे, के० के० तथा पँवार, ओ० एस०, Ind. J. Pure appl. Math. 1984, **15**(4), 343-354.

3. दुबे, के० के०, पँवार, ओ० एस० तथा तिवारी, के०के०, On quasi set-connected mappings (प्रेषित)

4. दत्ता, एम० सी०, पी एच डी B. I. T. and Sc. Pilani 1971.

5. जैन, पी० सी०, पी० एच० डी० थीसिस डा० हरी सिंह गौड़ विश्वविद्यालय, सागर 1982

6. कुराटोस्की, के० Topology, Vol. II Academic Press, New York, 1968.

7. मुखर्जी, एम० एन० तथा बनर्जी, जी० के०, Indian J. Pure appl. Math. 1986, **16**(9), 1106-1113.

nana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

लेड द्वारा पत्तीदार सब्जियों को पहुँचने वाली हानि

शिवगोपाल मिश्र तथा विनय कुमार
शीलाधर मृदा शोध संस्थान
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

[प्राप्त—नवम्बर 9, 1991]

सारांश

हमने शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान के प्रायोगिक प्रक्षेत्र में मृदा प्रदूषक लेड का विषैला प्रभाव देखने के उद्देश्य से दो पत्तीदार सब्जियों, पालक तथा मेथी, को सूचक फसलों के रूप में चुना। प्रक्षेत्र के प्लाटों में लेड (लेड नाइट्रेट) की चार विभिन्न मात्राएँ (0, 50, 100, व 200 पीपीएम लेड) डाल कर उपर्युक्त दो फसलें क्रमवार उगायी गयीं। प्रारम्भ में इन फसलों पर बाह्य रूप से लेड का कोई प्रभाव नहीं दिखा, किन्तु बाद में पौधों की बढ़वार तथा उपज पर प्रतिकूल प्रभाव परिलक्षित हुआ। पौधों के रासायनिक विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि लेड की मात्रा में वृद्धि के साथ पौधों में भी लेड की मात्रा में वृद्धि होती है। इसी वृद्धि के कारण पत्तीदार फसलों की वृद्धि तथा उपज में कमी आती है।

Abstract

Loss due to lead on leafy vegetables. *By* S. G. Misra and Vinay Kumar, Sheila Dhar Institute of Soil Science, University of Allahabad, Allahabad.

Field experiments were conducted at Sheila Dhar Institute experimental farm in order to find out the toxic effect of lead on leafy vegetables. Spinach and fenugreek were the two crops grown in succession. The plots were treated with four different doses of lead (0, 50, 100, and 200 as lead nitrate) and then sowing was done. In the beginning no harmful effect could be visible externally in both the crops but later on growth and yield of spinach and fenugreek were affected. On analysing the plant materials, it was found that the lead content in plant samples increased with increasing doses of lead. This resulted in the decrease of growth and yield of the leafy vegetables.

दिनों-दिन पर्यावरण के प्रदूषित होने, कृषि में उर्वरकों का प्रयोग बढ़ने, सिंचाई के लिए स्वच्छ जल की अनुपलब्धता के कारण प्रदूषित जल के अधिकाधिक उपयोग के फलस्वरूप मृदा में प्रदूषकों की मात्रा बढ़ती जा रही है। इसके अतिरिक्त पौधे पत्तियों व अन्य बाह्य अंगों द्वारा वातावरण से हानिकारक तत्वों, लेड, कैडमियम, क्रोमियम, व निकिल का शोषण करते रहते हैं (सेविन्स आदि[1])। देश में हरित क्रांति के फलस्वरूप अनाजों का जहाँ रिकार्ड उत्पादन हुआ है वहीं उपज की वृद्धि के लिए उन्नतशील बीजों व यन्त्रों के साथ-साथ कीड़ों व बीमारियों को नष्ट करने वाले रसायनों तथा उर्वरकों का प्रति हैक्टर प्रयोग भी बढ़ा है, जिनमें विभिन्न हानिकारक तत्व जैसे, लेड, कैडमियम व क्रोमियम प्रचुरता में पाये जाते हैं (सिंह और विस्वास[2])। सिंचाई के लिए प्रयुक्त नालों व नदियों के प्रदूषित जल में बड़ी मात्रा में हानिकारक तत्वों की उपस्थिति सिद्ध हो चुकी है (पाटिल, इत्यादि[3])। कुल मिलाकर ये सारे तत्व भूमि तथा फसलों पर विषैला व हानिकारक प्रभाव डालते हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए हमने प्रदूषक तत्व सीसे के प्रभाव को पत्तीदार तरकारियोंमें देखा। इसके लिए लेड की चार अलग-अलग मात्राएँ (0, 50, 100 तथा 200 पी० पी० एम० लेड) प्रयुक्त करते हुए पालक तथा मेथी की फसलें उगाई गईं। लेड की ये मात्राएँ जानबूझकर उच्च रखी गई हैं जिससे सही परिणाम प्राप्त हो सकें।

प्रयोगात्मक

प्रक्षेत्र की तैयारी

शीलाधर मृदा विज्ञान संस्थान के प्रयोगिक फार्म पर यादृच्छिक विधि द्वारा चार उपचारों की तीन-तीन आवृत्तियों के लिए प्लाट तैयार किये गये। वर्ष 1988-89 के सर्दी के मौसम में पालक तथा मेथी की फसलें उगायी गयीं। परीक्षण प्लाटों का आकार 1 मी०^2 रखा गया। फसलों की कटाई परिपक्व होने पर की गई। पौधे के विभिन्न भागों के रासायनिक विश्लेषण के लिए प्रत्येक प्लाट से अलग-अलग नमूने लिए गए।

उपचार

प्रक्षेत्र के 1 मी०^2 क्षेत्रफल के प्लाटों में 0, 50, 100 तथा 200 पी० पी० एम० लेड प्रति प्लाट डाला गया। तैयार प्रक्षेत्र में नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश की 50:30:30 कि०/है० मात्रा रासायनिक उर्वरकों द्वारा दी गई। लेड की मात्रा लेड नाइट्रेट विलयन के रूप में, एन० पी० के० को क्रमशः यूरिया, सुपरफॉस्फेट, तथा म्यूरेट ऑफ पोटाश के रूप में मृदा में मिलाया गया। तैयार प्रक्षेत्र में पालक का बीज 5 ग्रा० प्रति प्लाट की दर से 15 अक्टूबर 1988 को बोया गया। पालक की फसल के बाद उसी खेत में दूसरी फसल मेथी की 15 जनवरी 1989 को 5 ग्राम बीज प्रति प्लाट की दर से बोयी गयी। दोनों फसलों में प्रायः 10 दिनों के अन्तराल से हल्की सिंचाइयाँ की गयीं। फसलों की कटाई से पूर्व दोनों फसलों की ऊँचाई नापी गयी। पालक को बोने के 60 दिन बाद तथा मेथी को 90 दिन बाद जड़ सहित उखाड़ लिया गया। दोनों फसलों का हरा-भार ज्ञात किया गया। प्राप्त परिणामों को सारणीयों (सारणी 1-6) के माध्यम से प्रदर्शित किया गया है।

पालक तथा मेथी की जड़ों एवं तनों के नमूने को द्वि-अम्ल के मिश्रण से पाचित किया गया। तत्पश्चात् निष्कर्षों में लेड का सान्द्रण ज्ञात करने के लिए 'एटामिक एब्जार्प्सन स्पेक्ट्रोफोटोमीटर' का उपयोग किया गया। यह सुविधा केन्द्रीय मत्स्य प्रग्रहण शोध संस्थान, बैरकपुर (प० बंगाल) के सौजन्य से उपलब्ध हुई।

परिणाम तथा विवेचना

पौधों की लम्बाई तथा उपज

सारणी 1-2 से यह स्पष्ट है कि पालक व मेथी के पौधों की लम्बाई 50 व 100 पी० पी० एम० लेड डालने से नियन्त्रण प्लाटों की तुलना में क्रमश: 8%, 17%, 7% और 12% घटी। लेड की सर्वोच्च मात्रा (200 पी० पी० एम०) डालने से दोनों फसलों की वृद्धि में लगभग 20 प्रतिशत की कमी आयी। नियन्त्रण प्लाटों में पौधों की लम्बाई सर्वाधिक देखी गयी। दोनों फसलों की उपज में भी ऐसा ही सम्बन्ध प्राप्त हुआ (सारणी 3-4) परन्तु। 50 पी० पी० एम० लेड के प्रयोग से पालक में 22% की वृद्धि देखी गई, जिसका कारण अज्ञात रहा। जबकि 100 पी० पी० एम० लेड स्तर पर नियन्त्रण प्लाट की तुलना में पालक की उपज में 19% तथा 200 पी० पी० एम० के सर्वोच्च स्तर पर 53% की कमी देखी गई। मेथी की फसल में भी लेड के इन्हीं स्तरों पर उपज में क्रमश: 5%, 25% और 48% की कमी दिखलायी पड़ी जबकि नियन्त्रण प्लाट में मेथी की उपज सर्वाधिक रही।

इन प्रयोगों से स्पष्ट है कि लेड की बढ़ती हुई मात्रा पत्तीदार सब्जियों की वृद्धि तथा उपज पर बुरा प्रभाव डालती है। खॉन्स[4] द्वारा 2 पी० पी० एम० लेंड डालकर पालक उगाने पर उसकी वृद्धि, पत्तियों की संख्या तथा उपज में काफी गिरावट आयी। इसी प्रकार के परिणाम शुक्ला[5] को भी प्राप्त हुए हैं।

पौधे की पत्तियों तथा जड़ों द्वारा लेड का शोषण

सारणी 5-6 के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि पालक की पत्तियों द्वारा लेड अवशोषण, नियन्त्रण की तुलना में 50 पी० पी० एम० लेड के उपचार पर 1.4 गुनी, 100 पी० पी० एम० पर 2.2 गुनी तथा अत्यधिक उच्च मात्रा (200 पी० पी० एम०) पर पाँच गुनी तथा जड़ों में क्रमश: 1.5, 1.9 व 4.5 गुनी वृद्धि होती है। इसी प्रकार के परिणाम मेथी में भी देखे गये। उसमें 50, 100, तथा 200 पी० पी० एम० लेड के उपचार पर पत्तियों वाले भाग में 1.7 गुनी, 2.8 गुना, व 6.5 गुनी, जड़ों में क्रमश: 1.4, 1.9 व 5 गुनी तक लेड शोषण में वृद्धि पायी गयी। शुक्ला[6] ने पालक, मक्का एवं शलजम में अधिक लेड की मात्रा वाले उपचार में पौधों में उपस्थित लेड का स्तर उच्च पाया है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त परिणामों द्वारा यह सिद्ध होता है लेड की बढ़ती हुई मात्रा पत्तीदार पौधों की बढ़वार तथा उपज पर अत्यन्त हानिकारक प्रभाव डालती है। भूमि में लेड की मात्रा बढ़ने से पौधों में शोषित

मात्रा बढ़ती जाती है जिससे पत्तीदार सब्जियों की उपज घटती है और लेड की उच्च मात्रा होने से वे खाने के योग्य नहीं रहतीं ।

सारणी 1

पालक की वृद्धि पर लेड का प्रभाव

लेड स्तर (मिग्रा०/कि०)	माध्य वृद्धि (सेमी०)
लेड-0	7.48
लेड-50	6.92
लेट-100	6.21
लेड-200	6.05

सारणी 2

मेथी की वृद्धि पर लेड का प्रभाव

लेड स्तर (मिग्रा०/कि०)	माध्य वृद्धि (सेंमी०)
लेड-0	16.23
लेड-50	15.17
लेड-100	14.33
लेड-200	13.10

सारणी 3

पालक की उपज पर लेड का प्रभाव

लेड स्तर (मिग्रा०/कि०)	माध्य उपज (किग्रा०/मी०^2)
लेड-0	0.900
लेड-50	1.100
लेड-100	0.730
लेड-200	0.420

सारणी 4

मेथी की उपज पर लेड का प्रभाव

लेड स्तर (मिग्रा०/कि०)	माध्य उपज (किग्रा० मी०²)
लेड-0	0.800
लेड-50	0.760
लेड-100	0.600
लेड-200	0.420

सारणी 5

पालक के पौधों में लेड की सान्द्रता पर लेड स्तर का प्रभाव

लेड स्तर (मिग्रा०/किग्र०)	पौधे के विभिन्न भागों में लेड (मिग्रा०/किग्र०)	
	पत्तियाँ	जड़ें
लेड-0	0.94	0.62
लेड-50	1.31	0.90
लेड-100	2.11	1.13
लेड-200	5.22	2.89

सारणी 6

मेथी के पौधों में लेड की सान्द्रता पर लेड स्तर का प्रभाव

लेड स्तर (मिग्रा०/किग्र०)	पौधे की विभिन्न भागों में लेड (मिग्रा०/किग्र०)	
	पत्तियाँ	जड़ें
लेड-0	0.90	0.61
लेड-50	1.49	0.90
लेड-100	2.52	1.19
लेड-200	5.99	3.00

निर्देश

1. सैबिन्स, डी०डी०, गोर्डन, एम० तथा गाल्स्टन, ए०डब्लू०, Plant Physiol. 1969, **44**, 1355-63.

2. सिंह, आर० तथा बिस्वास, बी० सी०, Trans. 12th Int. Congr. Soil Sci. 1982, **4**, 227-247.

3. पाटिल, ए० डी०, एलोन, बी० जेड० तथा भिडे, ए० डी०, Current Res. in India 1985, 189-199.

4. रावोन्स, एस० इत्यादि, Plant and Soil, 1985, **74**, 87-94.

5. शुक्ला, पी० के०, डी० फिल थीसिस, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, 1991.

6. शुक्ला, पी० के०, डी० फिल थीसिस, इलाहाबाद विश्वविद्यालय 1991.

Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

फाक्स H-फलन का अर्ध आयु काल ज्ञात करने के लिए अनुप्रयोग

अशोक रोंघे

सेठ शिताबराय लक्ष्मीचन्द जैन कनिष्ठ महाविद्यालय, विदिशा (म० प्र०)

[प्राप्त—सितम्बर 12, 1991]

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में पृथ्वी के वातावरण में किसी स्थान विशेष पर (परमाणु बम, विषैली गैस) जैसे कि हिरोशिमा (6.8.1945), नागासाकी (9.8.1945), कुवैत (16.1.1991) पर डाले गये बम एवं भोपाल गैस त्रासदी (2.12.1984) इत्यादि के दुष्प्रभाव कितने समय तक वहाँ के वातावरण में रह सकते हैं या वहाँ के परिवेश को अपनी मूल अवस्था में आने में कितना समय लगेगा, इस आयुकाल को हम फाक्स *H*-फलन के रूप में दर्शायेंगे। प्रस्तुत प्रपत्र में यूरेनियम से बने परमाणु बम के कुप्रभाव का समय ज्ञात करने का सूत्र निकाला गया है।

Abstract

Application of Fox's H-function for obtaining half life period. *By* Ashok Ronghe, Seth Shitabrai Laxmi Chand Jain Kanishtha Mahavidyalaya, Vidisha (M. P.).
A formula has been obtained for finding out the time period of bad effect of atom bomb made of uranium.

1. प्रस्तावना

फाक्स[5] द्वारा प्रचारित *H*-फलन को निम्नलिखित विधि से परिभाषित और अंकित किया गया है :

$$H_{p,\, q}^{m,\, n}\left[Z \left|\begin{matrix}((a_j,\, \alpha_j))\\((b_j,\, \beta_j))\end{matrix}\right.\right]=\frac{1}{2\pi i}\int_L \theta(z)\, z^s\, ds, \tag{1.1}$$

जहाँ

$$\theta(z)=\frac{\prod_{j=1}^{m}\Gamma(b_j-\beta_j s)\prod_{j=1}^{n}\Gamma(1-a_j+\alpha_j s)}{\prod_{j=m+1}^{q}\Gamma(1-b_j+\beta_j s\prod_{j=n+1}^{p}\Gamma(a_j-\alpha_j s)}. \tag{1.2}$$

रिक्त गुणनफल है, जिसे इकाई मान लिया जाता है।

$$1\leqslant m\leqslant q,\ 0\leqslant n\leqslant p,$$

एवं प्राचल ऐसे हैं कि

$$\Gamma(b_j-\beta_j s),\ (j=1,\ \ldots,\ n)$$

के पोल

$\Gamma(1-a_j+\alpha_j s),\ (j=1,\ \ldots,\ n)$. के संतापी हैं तथा L एक उपयुक्त कंटूर है।

ब्राक्समा[2] ने यह सिद्ध किया है कि समाकलन (1.1) परम अभिसारी हैं।

जब $\theta>0,\quad |arg\ (z)|<\frac{1}{2}\theta\pi,$

जहाँ

$$\theta=\sum_{j=1}^{n}\alpha_j+\sum_{j=1}^{m}\beta_j-\sum_{j=m+1}^{p}\alpha_j-\sum_{j=n+1}^{q}\beta_j, \tag{1.3}$$

2. अर्ध आयुकाल को प्रदर्शित करने वाला मुख्य सूत्र जो कि H-फलन के रूप में दर्शाया गया है।

$$\log\left\{\int H_{p+1,\ q+1}^{m+1\ ,\ n}\left[Z\left|\begin{matrix}((a_p,\ \alpha_p)),\ (M_1\ ;\ u_1)\\(1-m_1:u_1),\ ((b_q\ .\ \beta_q))\end{matrix}\right.\right]dm_1-\right.$$

$$\text{काल (Time) : वर्ष}=\frac{\left.\int H_{p+1,\ q+1}^{m+1,\ n}\left[Z\left|\begin{matrix}((a_p\ .\ \alpha_p)),\ (m_1:u_1)\\(1-M_1:u_1),\ ((b_q\ .\ \beta_q))\end{matrix}\right.\right]dm_2\right\}}{H_{p+1\ .\ q+1}^{m\ .\ n+1}\left[Z\left|\begin{matrix}(-T_1:t_1),\ ((a_p\ .\ \alpha_p))\\((b_q\ .\ \beta_q)),\ (1-T_1:t_1)\end{matrix}\right.\right]}$$

$$-H_{p+1\ .\ q+1}^{m\ .\ n+1}\left[Z\left|\begin{matrix}(-T_2\ .\ t_2),\ ((a_p\ .\ \alpha_p))\\((b_q\ .\ \beta_q),\ ((1-T_2,\ t_2)\end{matrix}\right.\right]$$

यह सूत्र निम्न प्रतिबन्धों के अन्तर्गत वैध है।

$$u_1>0,\ u_3>0,\ |arg\ (z)|<\frac{1}{2}\theta\pi,$$

$$Re[m_1-u_1\ (a_j/\alpha_j)]>0,\ Re[m_2-u_2(a_j/\alpha_j)]>0,$$

$$Re[T_1+t_1\,(a_j/a_j)]>0,\ Re[T_2+t_2(a_j/a_j)]>0,$$

$$j=\{1, 2, \ldots, m\} \tag{2.1}$$

3. सूत्र की उपपत्ति

"यूरेनियम की अपघटित मात्रा की दर किसी समय उसके कुल भार के समानुपाती होती है।"

माना कि यूरेनियम की मात्रा t समय बाद m ग्राम है, तब यूरेनियम को अपघटन की दर के लिए समीकरण होगा (देखें [3] व[4])।

$$dm/dt=-\mu m, \tag{3.1}$$

$-\mu$ एक स्थिरांक है जो यह दर्शाता है कि समय के सापेक्ष अपघटन की दर कम होती है। (अतः वातावरण में समय के साथ बम, गैस आदि के कुप्रभाव कम होते जाते हैं)।

(3.1) का समाकलन रूप होगा,

$$\int\frac{\Gamma m\ dm}{\Gamma 1+m}=-\mu\frac{\Gamma(t+1)}{\Gamma t}+c, \tag{3.2}$$

प्रारम्भ में $t=0$, $m=M$ तब

$$c=\int\frac{\Gamma(M)}{\Gamma(1+m)}\ dm, \tag{3.3}$$

पुनः माना कि यूरेनियम की T_1 समय पर मात्रा M_1 है, किन्तु जैसे ही समय बढ़कर T_2 हो गया तब मात्रा M_2 रह गई। अर्थात् $T_2>T_1$, $m_1>m_2$ अतः,

$$\mu\ \frac{\Gamma(T_1+1)}{\Gamma(T_1)}=\int\frac{\Gamma(m_1)\ dm_1}{\Gamma(1+m_1)}-\int\frac{\Gamma(m)\ dm}{\Gamma(1+m)} \tag{3.4}$$

$$\mu\ \frac{\Gamma(T_2+1)}{\Gamma(T_2)}=\int\frac{\Gamma(m_2)\ dm_2}{\Gamma(1+m_2)}-\int\frac{\Gamma(m)\ dm}{\Gamma(1+m)} \tag{3.5}$$

समीकरण (3.4) एवं (3.5) से

$$-\mu\left\{\frac{\Gamma(T_2+1)}{\Gamma(T_2)}-\frac{\Gamma(T_1+1)}{\Gamma(T_1)}\right\}=\int\frac{\Gamma(m_1)\ dm_1}{\Gamma(1+m_1)}-\int\frac{\Gamma(m_2)\ dm_2}{\Gamma(1+m_2)} \tag{3.6}$$

अब (3.6) में[1]

$$((1)),\ \langle m_1=m_1-u_1\,s,\ m_2=m_2-u_2\,s\rangle$$

तथा

$$<(T_1=T_1+t_1\, s), (T_2=T_2+t_2\, s)>,$$

रखने पर (क्योंकि जैसे-जैसे काल बीतता जायेगा, परमाणु बम, विषैली गैस आदि का प्रभाव कम होता जायेगा), तथा दोनों ओर $(2\,\pi i)^{-1}\,\theta(s)\,z^s$ का गुणा करने पर तथा कंटूर L की दिशा में s के प्रति समाकलित करने पर और H फलन (1.1) का सम्प्रयोग करने पर हमें अर्ध आयु काल का प्रयुक्त सूत्र प्राप्त होता है।

निर्देश

1. अनन्दानी, पी० तथा नाम प्रसाद, **विज्ञान परिषद् अनुसंधान पत्रिका**, 1976, **18**, 22-26.
2. ब्राक्समा, बी० एल० जे०, **काम्पोसिट मैथ.** 1904, **15**, 293-341.
3. ग्रेवाल, बी० एन०, **हायर इंजीनियरिंग मैथ**, 1978, पृष्ठ 462.
4. ग्लास्टन, एस०, टैक्स बुक्स ऑफ फिजिकल केमेस्ट्री, 1969.
5. फाक्स, सी०, **ट्रान्स० अमे० मैथ० सोसायटी**, 1961, **98**, 395-421.

Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

जयपुर शहर की बाहरी सड़कों पर वन्य प्राणियों की सड़क दुर्घटनाएँ

सतीश कुमार शर्मा
विश्व वानिकी वृक्ष उद्यान, झालाना डूँगरी, जयपुर (राजस्थान)

[प्राप्त—नवम्बर 8, 1991]

सारांश

महानगरों के विस्तार के साथ ही उनकी परिधि पर स्थित वन धीरे-धीरे किन्तु लगातार मनुष्य द्वारा नष्ट किये जा रहे हैं जिससे उनमें रहने वाले वन्य प्राणी आवासहीनता के शिकार हो रहे हैं। शहरी भीड़-भाड़ से बचने के लिए प्रायः बाईपास मार्ग शहर की परिधि से निकाले जाते हैं जहाँ बेघरबार वन्य प्राणी वाहनों की चपेट में आकर मारे जाते हैं। प्रस्तुत प्रपत्र में 30 माह तक 3 किमी० लम्बे जयपुर-आगरा बाईपास मार्ग पर अध्ययन करने पर पाया गया कि 86 स्तनधारी, 50 पक्षी, 6 सरीसृप तथा 35 उभयचारी—कुल 177 प्राणी दुर्घटनाओं में मारे गये।

Abstract

Accidents of wild animals on roads at outskirts of Jaipur city. *By* Satish Kumar Sharma, World Forestry Arboretum, Jhalana Dungri, Jaipur (Raj.).

With the rapid growth of metropolitan cities forests present at their fringes are being slowly but steadily destroyed by men as result of which wild animals are facing problems of homelessness. Generally to avoid the congestion of the cities, bye-pass roads are constructed at the outskirts of cities where homeless wild animals meet the vehicular traffic resulting in their deaths in accidents. In the present paper a toll of 86 mammalian lives, 50 avian, 6 reptilian and 34 amphibian is described which was concluded from a survey of 3 Km. long strip of Jaipur-Agra bye-pass road for 30 months.

प्रस्तुत अध्ययन जयपुर शहर के पूर्वी छोर पर जयपुर-आगरा बाईपास (मालवीयनगर से विश्व वानिकी वृक्ष उद्यान) मार्ग पर अगस्त 1988 से जनवरी 1991 तक 3 किमी० लम्बे मार्ग पर किया

गया। मार्च 1989 में विश्व वानिकी वृक्ष उद्यान के द्वार के सामने दिन में ट्रक, बस, टेम्पो, दुपहिया वाहनों जैसे स्वचालित वाहनों का औसत लगभग 200 वाहन प्रति घण्टा था तथा साइकिल एवं रिक्शा जैसे मानवचालित वाहनों का औसत लगभग 100 वाहन प्रति घण्टा था। मार्ग की औसत चौड़ाई 650 सेमी० नापी गयी जिस पर दो बड़े वाहन एकसाथ निकल सकते हैं।

अध्ययन क्षेत्र की पारिस्थितिक विशेषताय

अध्ययन हेतु चयनित मार्गखण्ड, जयपुर महानगर के पूर्वी छोर पर झालाना वन क्षेत्र से सँट कर बनाया गया है। इस मार्ग के दोनों स्थान पर कच्ची बस्तियाँ (slums) हैं तथा कई राजकीय कार्यालय हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय झालाना वन क्षेत्र सघन वनों से आच्छादित था लेकिन तेजी से बढ़ती जनसंख्या के दबाव, अतिक्रमण, खनन, अग्नि घटनाओं, चराई, ईंधन हेतु चोरी-छुपे लकड़ी निकास, मृदा क्षरण, सड़क निर्माण, वन क्षेत्र का गैरवानिकी उपयोग हेतु अन्य संस्थाओं को हस्तान्तरण, 1983 में आई तेज बाढ़ आदि के कारण वनों के फैलाव तथा सघनता इन दोनों में काफी कमी आयी है। इस क्षेत्र के निवासी वन्य प्राणी (कभी यहाँ बाघ तथा तेन्दुये रहते थे) आवासहीनता के शिकार हो गये। रात में बल्बों की रोशनी, शहरी भागदौड़ से अशान्त रातें, खानों में विस्फोट से उत्पन्न आवाज, मनुष्य तथा पशुओं द्वारा व्यवधान, अग्नि घटनायें, पेयजल स्रोतों का नष्ट होना, क्षेत्रों की निरन्तरता भंग होना यहाँ के वन्य प्राणियों के लिए वज्रपात सिद्ध हुए हैं विशेष कर बड़े स्तनधारियों ने इस क्षेत्र से पलायन कर लिया है।

झालाना डूँगरी के कुछ क्षेत्र में बाडबन्दी करके विश्ववानिकी वृक्ष उद्यान की स्थापना की जा रही है लेकिन शेष क्षेत्र अवैध खनन तथा वनों की बर्बादी का शिकार हो रहा है।

अध्ययन हेतु चयनित मार्ग के दोनों ओर बड़े-बड़े वृक्ष नहीं हैं। विश्ववानिकी वृक्ष उद्यान के सामने एक किलोमीटर क्षेत्र में बाईपास मार्ग के दोनों ओर फूलदार वनस्पतियाँ लगायी गयी हैं तथा चैन-लिंक फैन्सिग की गयी है। प्रस्तुत अध्ययन में फूलदार वृक्षावली से गुजरने वाले बाई-पास मार्ग की आधी लम्बाई (1/2 किमी०) ही चयनित की गयी हैं।

अध्ययन हेतु चयनित मार्ग में एक तिराहा दो चौराहों के बीच में पड़ते हैं एवं चार स्थानों पर गतिरोधक हैं। कुल मिला कर सड़क पर परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि वाहन 25-40 किमी० प्रति घन्टा की गति से ही चल पाते हैं।

अध्ययन प्रक्रिया

चयनित मार्ग खण्ड पर 30 माह तक प्रातः 7.30 बजे तथा संध्या 6.00 बजे दुर्घटनाग्रस्त प्राणियों को ढूंढ कर प्रेक्षण लिए गए। सड़क के दोनों ओर 15-15 मीटर तक मृत एवं घायल प्राणियों को खोजा गया। जो प्राणी घायल होकर भाग निकले तथा प्रेक्षण के समय मौजूद नहीं थे उन्हें गणना में सम्मिलित नहीं किया गया। जिस स्थान पर प्राणी दुर्घटनाग्रस्त हुए उस बिन्दु को सफेद पेन्ट से चिन्हित कर दिया

ताकि वह प्राणी या उसका सड़क पर चिपका अवशेष दूसरे दिन पुनः न गिन लिया जाये। प्रतिमाह ाग 20-25 दिन प्रेक्षण लिए गए। इस प्रकार प्रतिमाह लगभग 5-10 दिन ऐसे होते थे जिनमें प्रेक्षण लिए जा सके।

सर्वेक्षण में अपृष्ठवंशी प्राणियों तथा मनुष्यों की सड़क दुर्घटनाओं को सम्मिलित नहीं किया गया कुछ प्राणी जैसे पालतू तथा आवारा कुत्ते, गाय, भैंस आदि वन्य प्राणी न होते हुए भी प्रस्तुत अध्ययन ामिल किये गये हैं।

परिणाम तथा विवेचना

अध्ययन के दौरान दुर्घटना सर्वे में मृत पाये प्राणियों की सूची सारणी 1 में दी गई है।

वन्य प्राणियों की सड़क दुर्घटनायें क्यों तथा कैसे होती हैं इसका लेखा-जोखा शर्मा[1-2] द्वारा ्त किया जा चुका है। यहाँ ताजा तथ्यों का प्राणी-वर्ग के अनुसार विवेचन किया जा रहा है:

धारी :

(1) सर्वाधिक संख्या में कुत्ते तथा उनके पिल्ले दुर्घटनाग्रस्त हुए। दूसरा स्थान गिलहरियों तथा तीसरा स्थान झाऊ चूहों का रहा। चौथे स्थान पर नेवले रहे।

(2) शहर की सीमा पर भारी बन विनाश के कारण बिल्लियाँ आवासहीनता की शिकार हुयीं। बड़ी बिल्लियाँ जैसे बाघ तथा तेन्दुआ यहाँ से पलायन कर गये हैं। कभी-कभी तेन्दुआ जरूर घूमता हुआ आ जाता है। (तेन्दुओं का नजदीकी आवास नाहरगढ़ अभयारण्य 15 किमी० तथा रामगढ़ अभयारण्य 35 किमी० दूर है।) छोटी बिल्लियों में जंगली बिल्ली अभी तक निवास करती पायी जाती है जो रात को शहर की बाहरी बस्तियों में शिकार करने पहुँचती है तथा सूरज उगने से पहले फिर जंगल में लौट आती है। रात्रि आवागमन में यह बिल्ली मारी जाती है। रास्ता काटती बिल्ली को अपशकुनी मान कर कुछ चालक जान कर भी उन्हें कुचलने का प्रयास करते हैं।

(3) नेवले मृत गिलहरियों को खाने के लालच में मारे जाते हैं। मृत गिलहरी को उठा कर भागता हुआ नेवला पर्याप्त तेज नहीं दौड़ पाता तथा वाहन से कुचल जाता है।

:

(1) सर्वाधिक संख्या में मरने वाले पक्षियों में सबसे अधिक गिद्ध और फिर क्रमशः कबूतर व फाख्ता, गौरैया, कौवा आदि थे।

(2) गिद्धों की लगभग सभी दुर्घटनएँ सड़क पर एक पुल पर हुई जो दोनों ओर पैरापैट दिवार से घिरा है। पुल के आस-पास शहर गन्दगी के ढेर के ढेर लगे रहते हैं। कई बार स्थानाभाव में सँकरे पुल के बीच में भार खींचने वाले पशु वाहनों से टकराकर मारे जाते हैं।

गया। मार्च 1989 में विश्व वानिकी वृक्ष उद्यान के द्वार के सामने दिन में ट्रक, बस, टेम्पो, दुपहिया वाहनों जैसे स्वचालित वाहनों का औसत लगभग 200 वाहन प्रति घण्टा था तथा साइकिल एवं रिक्शा जैसे मानवचालित वाहनों का औसत लगभग 100 वाहन प्रति घण्टा था। मार्ग की औसत चौड़ाई 650 सेमी० नापी गयी जिस पर दो बड़े वाहन एकसाथ निकल सकते हैं।

अध्ययन क्षेत्र की पारिस्थितिक विशेषताय

अध्ययन हेतु चयनित मार्गखण्ड, जयपुर महानगर के पूर्वी छोर पर झालाना वन क्षेत्र से सट कर बनाया गया है। इस मार्ग के दोनों स्थान पर कच्ची बस्तियाँ (slums) हैं तथा कई राजकीय कार्यालय हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय झालाना वन क्षेत्र सघन वनों से आच्छादित था लेकिन तेजी से बढ़ती जनसंख्या के दबाव, अतिक्रमण, खनन, अग्नि घटनाओं, चराई, ईंधन हेतु चोरी-छुपे लकड़ी निकास, मृदा क्षरण, सड़क निर्माण, वन क्षेत्र का गैरवानिकी उपयोग हेतु अन्य संस्थाओं को हस्तान्तरण, 1983 में आई तेज बाढ़ आदि के कारण वनों के फैलाव तथा सघनता इन दोनों में काफी कमी आयी है। इस क्षेत्र के निवासी वन्य प्राणी (कभी यहाँ बाघ तथा तेन्दुये रहते थे) आवासहीनता के शिकार हो गये। रात में बल्बों की रोशनी, शहरी भागदौड़ से अशान्त रातें, खानों में विस्फोट से उत्पन्न आवाज, मनुष्य तथा पशुओं द्वारा व्यवधान, अग्नि घटनायें, पेयजल स्रोतों का नष्ट होना, क्षेत्रों की निरन्तरता भंग होना यहाँ के वन्य प्राणियों के लिए वज्रपात सिद्ध हुए हैं विशेष कर बड़े स्तनधारियों ने इस क्षेत्र से पलायन कर लिया है।

झालाना डूँगरी के कुछ क्षेत्र में बाडबन्दी करके विश्ववानिकी वृक्ष उद्यान की स्थापना की जा रही है लेकिन शेष क्षेत्र अवैध खनन तथा वनों की बर्बादी का शिकार हो रहा है।

अध्ययन हेतु चयनित मार्ग के दोनों ओर बड़े-बड़े वृक्ष नहीं हैं। विश्ववानिकी वृक्ष उद्यान के सामने एक किलोमीटर क्षेत्र में बाईपास मार्ग के दोनों ओर फूलदार वनस्पतियाँ लगायी गयी हैं तथा चैन-लिंक फैन्सिग की गयी है। प्रस्तुत अध्ययन में फूलदार वृक्षावली से गुजरने वाले बाई-पास मार्ग की आधी लम्बाई (1/2 किमी०) ही चयनित की गयी हैं।

अध्ययन हेतु चयनित मार्ग में एक तिराहा दो चौराहों के बीच में पड़ते हैं एवं चार स्थानों पर गतिरोधक हैं। कुल मिला कर सड़क पर परिस्थितियाँ ऐसी हैं कि वाहन 25-40 किमी० प्रति घन्टा की गति से ही चल पाते हैं।

अध्ययन प्रक्रिया

चयनित मार्ग खण्ड पर 30 माह तक प्रात: 7.30 बजे तथा संध्या 6.00 बजे दुर्घटनाग्रस्त प्राणियों को ढूंढ कर प्रेक्षण लिए गए। सड़क के दोनों ओर 15-15 मीटर तक मृत एवं घायल प्राणियों को खोजा गया। जो प्राणी घायल होकर भाग निकले तथा प्रेक्षण के समय मौजूद नहीं थे उन्हें गणना में सम्मिलित नहीं किया गया। जिस स्थान पर प्राणी दुर्घटनाग्रस्त हुए उस बिन्दु को सफेद पेन्ट से चिन्हित कर दिया

गया ताकि वह प्राणी या उसका सड़क पर चिपका अवशेष दूसरे दिन पुनः न गिन लिया जाये। प्रतिमाह लगभग 20-25 दिन प्रेक्षण लिए गए। इस प्रकार प्रतिमाह लगभग 5-10 दिन ऐसे होते थे जिनमें प्रेक्षण नहीं लिए जा सके।

सर्वेक्षण में अपृष्ठवंशी प्राणियों तथा मनुष्यों की सड़क दुर्घटनाओं को सम्मिलित नहीं किया गया है। कुछ प्राणी जैसे पालतू तथा आवारा कुत्ते, गाय, भैंस आदि वन्य प्राणी न होते हुए भी प्रस्तुत अध्ययन में शामिल किये गये हैं।

परिणाम तथा विवेचना

अध्ययन के दौरान दुर्घटना सर्वे में मृत पाये प्राणियों की सूची सारणी 1 में दी गई है।

वन्य प्राणियों की सड़क दुर्घटनायें क्यों तथा कैसे होती हैं इसका लेखा-जोखा शर्मा[1-4] द्वारा प्रस्तुत किया जा चुका है। यहाँ ताजा तथ्यों का प्राणी-वर्ग के अनुसार विवेचन किया जा रहा है:

स्तनधारी :

(1) सर्वाधिक संख्या में कुत्ते तथा उनके पिल्ले दुर्घटनाग्रस्त हुए। दूसरा स्थान गिलहरियों तथा तीसरा स्थान झाऊ चूहों का रहा। चौथे स्थान पर नेवले रहे।

(2) शहर की सीमा पर भारी बन विनाश के कारण बिल्लियाँ आवासहीनता की शिकार हुयीं। बड़ी बिल्लियाँ जैसे बाघ तथा तेन्दुआ यहाँ से पलायन कर गये हैं। कभी-कभी तेन्दुआ जरूर घूमता हुआ आ जाता है। (तेन्दुओं का नजदीकी आवास नाहरगढ़ अभयारण्य 15 किमी० तथा रामगढ़ अभयारण्य 35 किमी० दूर है।) छोटी बिल्लियों में जंगली बिल्ली अभी तक निवास करती पायी जाती है जो रात को शहर की बाहरी बस्तियों में शिकार करने पहुँचती है तथा सूरज उगने से पहले फिर जंगल में लौट आती है। रात्रि आवागमन में यह बिल्ली मारी जाती है। रास्ता काटती बिल्ली को अपशकुनी मान कर कुछ चालक जान कर भी उन्हें कुचलने का प्रयास करते हैं।

(3) नेवले मृत गिलहरियों को खाने के लालच में मारे जाते हैं। मृत गिलहरी को उठा कर भागता हुआ नेवला पर्याप्त तेज नहीं दौड़ पाता तथा वाहन से कुचल जाता है।

पक्षी :

(1) सर्वाधिक संख्या में मरने वाले पक्षियों में सबसे अधिक गिद्ध और फिर क्रमशः कबूतर व फाख्ता, गौरैया, कौवा आदि थे।

(2) गिद्धों की लगभग सभी दुर्घटनाएँ सड़क पर एक पुल पर हुई जो दोनों ओर पैरापैट दिवार से घिरा है। पुल के आस-पास शहर गन्दगी के ढेर के ढेर लगे रहते हैं। कई बार स्थानाभाव में सँकरे पुल के बीच में भार खींचने वाले पशु वाहनों से टकराकर मारे जाते हैं।

सारणी 1

दुर्घटनाग्रस्त प्राणियों का विवरण जो दुर्घटनाओं में मारे गये

माह/सन्	स्तनधारी (Mammals)												
	जंगली बिल्ली (Felis Chaus)	टटीरा इंडिका (Tatira)	कुत्ता	गधा	गिलहरी (Funambulus pennanti)	सूअर	लंगूर (Pressbytis entellus)	घरेलू चूहा (Rattus rattus)	झाऊ चूहा (Hemiechinus auritus)	नेवला	झाड़ी चूहा (Golunda ellioti)	गाय	योग
अगस्त 1988	1												1
सितम्बर 1988		1	3	1	1								6
अक्टूबर 1988			1			1							2
नवम्बर 1988			1										1
दिसम्बर 1988			1		1								2
जनवरी 1989			8		1	1							10
फरवरी 1989			7		1								8
मार्च 1989	1		6		1								8
अप्रैल 1989			2										2
मई 1989			1										1
जून 1989			4										4
जुलाई 1989			5		2								7
अगस्त 1989			3										3
सितम्बर 1989			3			1						1	5
अक्टूबर 1989			2										2
नवम्बर 1989			1										1

दिसम्बर 1989			2					1					5
जनवरी 1990			2										2
फरवरी 1990													
मार्च 1990													
अप्रैल 1990			2										2
मई 1990													
जून 1990													
जुलाई 1990									1				1
अगस्त 1990													
सितम्बर 1990					1				3	1			5
अक्टूबर 1990			1						3				4
नवम्बर 1990										1			1
दिसम्बर 1990													
जनवरी 1991										1	1		2
योग	2	1	55	1	8	2	1	1	7	3	1	1	83

माह/सन्		पक्षी (Aves)										
		कौवा (Coruvs splendens)	गिद्ध (Gyps bengalensis)	बैंक मैना (Acridotheres ginginianus)	गौरैया (Passer domesticus)	क्रिस्टेड लार्क (Galerida cristata)	फाख्ता (Streptopelia decaocta)	कबूतर (Columba livia)	कॉमन मैना (Acridotheres tristis)	तीतर (Francolinus pondicerianus)	मोर (Pavo cristatus)	अन्य (Unidentitied Bird)	योग
अगस्त	1988	1	1										2
सितम्बर	1988			1	1								2
अक्टूबर	1988					1	1	1					3
नवम्बर	1988											1	1
दिसम्बर	1988				1								1
जनवरी	1989		1				1	1	1				4
फरवरी	1989		8										8
मार्च	1989		4		2		1						7
अप्रैल	1989	1	1		1		1	1					5
मई	1989							2					2
जून	1989									1			1
जुलाई	1989						1	1					2
अगस्त	1989												
सितम्बर	1989		1										1
अक्टूबर	1989												
नवम्बर	1989												
दिसम्बर	1989												

जनवरी 1990		3										3
फरवरी 1990												
मार्च 1990												
अप्रैल 1990												
मई 1990												
जून 1990												
जुलाई 1990												
अगस्त 1990	1							1		1		3
सितम्बर 1990										1		1
अक्टूबर 1990						1		1				2
नवम्बर 1990		1										1
दिसम्बर 1990											1	1
जनवरी 1991												
योग	3	20	1	5	1	6	6	2	2	2	2	50

माह/सन्	सरीसृप (Reptiles)							उभयचारी (Amphibians)					योग
	काला नाग (Naja naja)	दुमुही (Eryx conicus)	रॉयल स्नेक (Spalerosophis diadema)	धामण (Ptyas mucosus)	गार्डन लिजर्ड (Calotes versicolor)	गोह (Varanus bengalensis)	योग	टोमोप्टर्ना ब्रेवीसेप्स (Tomopterna breviceps)	मेंढक (Rana tigrina)	टोड (Bufo andersoni)	टोड (Bufo melanostictus)	योग	महायोग
अगस्त 1988								1	4	2	3	10	1
सितम्बर 1988									3	1	2	6	14
अक्टूबर 1988													10
नवम्बर 1988													2
दिसम्बर 1988													3
जनवरी 1989													14
फरवरी 1989													16
मार्च 1989	1	1					2						17
अप्रैल 1989					1	1	2						9
मई 1989													3
जून 1989													5
जुलाई 1989								2	1		2	5	14
अगस्त 1989									2		1	3	6
सितम्बर 1989									1			1	7
अक्टूबर 1989									1			1	3
नवम्बर 1989													1
दिसम्बर 1989													3

जनवरी 1990													5
फरवरी 1990													
मार्च 1990													
अप्रैल 1990													2
मई 1990													
जून 1990													
जुलाई 1990									2	1		3	4
अगस्त 1990			1				1			1		1	5
सितम्बर 1990													6
अक्टूबर 1990	1	1	1				3						9
नवम्बर 1990													2
दिसम्बर 1990													1
जनवरी 1991													2
योग	1	2	2	1	1	1	8	3	18	5	9	35	176

जब गिद्ध यहाँ मृत भोज करते हैं तो वाहनों से बचाव हेतु इधर-उधर भागते हैं। जो पैरापैट दिवार के अन्दर अवरोधित हो जाते हैं, कुचल कर मारे जाते हैं (शर्मा)[3]।

(3) सामान्यतः इस क्षेत्र में देखा गया है कि सन्ध्या समय सड़कों पर तीतर छोटे-छोटे झुंड बना कर चुगने आ जाते हैं तथा मारे जाते हैं।

(4) मरने वाले मोरों में दोनों नर मोर थे। ऐसा प्रतीत होता है कि पूँछ की अधिक लम्बाई के कारण सड़क पार करने में पक्षी द्वारा अपेक्षाकृत अधिक समय लिया जाता है। साथ ही वाहनों के गुजरने के बाद हवा का जो 'तूफान' सा उठता है उसमें भी पक्षी अपने को ठीक से नहीं सँभाल पाता।

सरीसृप :

(1) रॉयल स्नेक, धामण, काला नाग आदि लम्बे साँपों में गिने जाते हैं। लम्बे शरीर को सड़क पार कराने में लगने वाला अधिक समय दुर्घटना की सम्भावना को बढ़ाता है।

(2) यद्यपि दुमुही कम लम्बा साँप है लेकिन इसकी गति काफी धीमी होती है। अतः यह भी सड़क पार करने में अधिक समय लेता है।

उभयचर :

(1) इस क्षेत्र में जहाँ रेत उपलब्ध है तथा आस-पास पानी भी है (वर्षा में भराव का अस्थाई जल स्रोत) **टोमोप्टर्ना ब्रेवीसैप्स** नामक मेंढक पाया जाता है। यह मेंढ़क मिट्टी में धँस कर रहना पसन्द करता है तथा वर्षा में बहुत थोड़े समय बाहर निकलता है। चूंकि आस-पास पानी का स्थाई भराव नहीं है अतः वर्षा थमने के बाद यह बहुत जल्दी ही रेत में घुस जाता है। अन्य मेंढकों की तुलना में इसकी गतिशीलता कम है अतः यह अपेक्षाकृत कम संख्या में मरता है।

(2) रात में बिजली के बल्बों के नीचे में **टोमोप्टर्ना बेवीसैप्स, ब्यूफो एन्डरसोनाइ** तथा **ब्यूफो मैलानोस्टिकट्स** कीट पकड़ने हेतु प्रायः आते-जाते रहते हैं। रात में रोशनियों की तरफ आने-जाने में सड़क पार करते समय कुचले जाते हैं। स्मरण रहे लगभग सभी उभयचर रात में ही मारे जाते हैं (शर्मा[4])।

ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों मे वन्य प्राणियों की दुर्घटनाओं का तुलनात्मक अध्ययन

शर्मा[1,4] ने 1980 में भरतपुर जिले के हलैना गाँव के पास राष्ट्रीय उच्च मार्ग न० 11 पर ग्रामीण परिवेश में वन्य प्राणियों का अध्ययन किया। ग्रामीण क्षेत्र में वन्य प्राणियों की दुर्घटना का प्रकार जयपुर जैसे शहरी क्षेत्र से कई अर्थों में भिन्न है। शहरी परिवेश में सड़कों पर अधिक वाहन, अपेक्षाकृत कम गति, हॉर्न का अधिक प्रयोग, सड़कों पर मोड़ तथा गतिअवरोधकों की अधिक संख्या, पालतू पशुओं

का कम बाहुल्य, नगर परिषद् द्वारा सड़क पर मृत पड़े पशुओं को शीघ्र हटाना, सड़कों पर तथा आस-पास वन्य प्राणियों के उपयुक्त खाद्य एवं अखाद्य गन्दगी के ढेर; बिजली व टेलीफोन पोस्ट व तारों की बहुलता, प्रकाशमान अशान्त रात, धूल, शोर, प्रदूषण आदि कारक प्रभावी होते हैं । ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों की वन्य प्राणी दुर्घटनाओं का तुलनात्मक विवरण सारणी 2 में दिया गया है ।

सारणी 2

ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में वन्य प्राणियों की दुर्घटनाओं का तुलनात्मक विवरण

प्राचल	ग्रामीण क्षेत्र (हलैना, भरतपुर)*	शहरी क्षेत्र (जयपुर)
पारिस्थितिकी		
(1) अध्ययन हेतु चयनित सड़क खण्ड के दोनों ओर कृषि कार्य :	किया जाता है	नहीं किया जाता
(2) सड़क के दोनों बड़े-बड़े वृक्षों की उपस्थिति :	बड़े वृक्ष हैं	बड़े वृक्ष नहीं हैं
(3) सड़क के दोनों ओर पानी का भराव :	कई स्थानों पर	लगभग नहीं
(4) सड़क के दोनों ओर मानव आबादी	कम	सघन आबादी
(5) तीक्ष्ण मोड़ों की संख्या	कोई नहीं	मध्यम श्रेणी का एक मोड़
(6) गति अवरोधकों की संख्या	कोई नहीं	चार
(7) दिन में स्वचालित वाहनों की संख्या	11 वाहन/घन्टा	200 वाहन/घन्टा
(8) वाहनों की औसत गति	40-80 किमी॰ प्रति घन्टा	20-40 किमी प्रति घन्टा
(9) साइकिल व रिक्शों की संख्या	काफी कम	100 प्रति घन्टा
दुर्घटनायें		
(1) सबसे अधिक मरने वाले प्राणियों का क्रम		
(a) स्तनी	कुत्ता, भैंस, गधा नेवला, गिलहरी	कुत्ता, गिलहरी, झाऊ-चूहा, नेवला, जंगली बिल्ली

(b) पक्षी	फाख्ता, कौवा, देशी मैना, गिद्ध, तोता	गिद्ध, कबूतर व फाख्ता, गौरैया, कौवा
(c) सरीसृप	जलसाँप, कछुआ, धोबिया, गिरगिट, दुमूहा	दुमूही, रॉयल स्नेक
(d) उभयचर	राना टिगेरीना, ब्यूफो मैलानोस्टिकटस	राना टिगेरीना, ब्यूफो मैलानोस्टिकट्स
(2) मृत जानवरों का औसत (प्राणी प्रति माह प्रति किमी०)		
(a) स्तनी	8.0	0.92
(b) पक्षी	18.25	0.60
(c) सरीसृप	6.83	0.08
(d) उभयचर	3.5	0.38

* ग्रामीण क्षेत्र हलैना के पास राष्ट्रीय उच्च मार्ग 11 के किमी० 88 से 93 के मध्य 5 किमी० लम्बे रोड के आँकड़े प्रस्तुत किये गये हैं।

सारणी 2 के विवेचन से स्पष्ट है कि शहर की भीड़-भाड़ वाली सड़क की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों से जाने वाली सड़क पर अधिक वन्य प्राणी मारे जा रहे हैं। इसके कई कारण हो सकते हैं। यथा—

(1) शहरी समीपता में प्रदूषण, मानवीय व्यवधान, उपयुक्त आवास की कमी, अशान्त एवं प्रकाशमान रातें, शोर, असुरक्षा आदि के कारण वन्य प्राणी ठीक से अपने आप को शहरी क्षेत्र की परिधि पर स्थापित नहीं कर पाते जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में (कृषि, वन एवं बंजड) अधिक उपयुक्त एवं प्राकृतिक परिस्थितियाँ मिलती हैं अतएव वन्य प्राणी वहाँ रहना अधिक पसन्द करते हैं। इन क्षेत्रों में प्राणियों के मिलने की आवृत्ति अधिक होने से दुर्घटनाओं की आवृत्ति भी बढ़ती है।

(2) ग्रामीण क्षेत्र में सड़कें प्रायः सीधी, बिना गति अवरोधकों वाली होती हैं तथा इन पर साइकिल व पैदल सवार कम चलते हैं अतः यहाँ वाहन बहुत तेज चलते हैं। वाहनों की तेज गति से दुर्घटनाओं की संख्या बढ़ती है। शहरी क्षेत्र में वाहन अपेक्षाकृत धीरे चलते हैं जिससे सड़क पार कर रहे प्राणी को बच निकलने हेतु अपेक्षाकृत अधिक समय मिल जाता हैं।

(3) ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति घण्टे गुजरने वाले वाहनों की संख्या कम होती है। दो वाहनों के गुजरने के मध्य का समय कई बार कुछ 'बड़ा' होता है तथा इस शान्त समय में प्राणी सड़क पर आ जाते हैं। शहरी सड़कों पर छोटे वाहनों तथा भीड़-भाड़ से शान्त समय कठिनाई से मिल पाता है अतः प्राणी सड़क पर अपेक्षाकृत कम आते हैं।

(4) शहरी सड़कों पर हॉर्न का बहुत प्रयोग होता है अतः वन्य प्राणी दूर ही रहते हैं।

(5) ग्रामीण क्षेत्रों में फसल पकने पर कई प्रजातियों के पक्षी झुन्ड बना कर धावा बोलते हैं। सड़क पर झुन्ड के उड़ते समय कई बार वाहनों से सामना हो जाता है।

(6) शहरों से पालतू जानवर सड़क की पटरियों पर खुले नहीं चरते जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों की पटरियों पर पशु स्वतन्त्र चरते रहते हैं। पशुओं द्वारा पटरियों को चारागाह की तरह उपयोग करने पर उनके दुर्घटनाग्रस्त होने की सम्भावना बनी रहती है।

(7) ग्रामीण क्षेत्रों में सड़कों पर मारे जाने पशुओं को हटाने की कोई प्रभावी व्यवस्था नहीं है जिससे मृत पशुओं को खाने वाले मृतभोजी सड़कों पर दुर्घटनाग्रस्त होते रहते हैं। शहरों में नगर परिषद् द्वारा मरे पशुओं को तुरन्त हटा दिया जाता है अतः मृतभोजी सड़क से दूर रहे आते हैं।

शहरों की परिधि पर वन्य प्राणियों की दुर्घटनायें कम करने के उपाय :

चूंकि वन्य प्राणियों की गति पर हमारा कोई नियन्त्रण नहीं होता अतः दुर्घटना दर को शून्य कर पाना सम्भव नहीं है। तथापि कतिपय उपायों से दुर्घटनाओं में कमी लाई जा सकती है :

(1) वनों का विनाश शहरी परिधि पर रोका जाना चाहिए।

(2) सड़कें चौड़ी रखी जावें तथा वाहनों की गति 40 किमी० प्रति घन्टा से अधिक बढ़ने की अनुमति न दी जावे।

(3) वन क्षेत्रों में ही वन्य प्राणियों के पीने के पानी की व्यवस्था की जावे।

(4) महत्वपूर्ण सड़कों के किनारे (विशेषकर जो वन क्षेत्र के पास हों) या बहुत पास मुर्गी फार्म, भेड़ फार्म, सूअर फार्म, डेयरी, कचरा संग्रहण स्थल, अनाज की दुकानें, बूचंडखाने आदि नहों।

(5) सड़कों के दोनों ओर समानान्तर नालियाँ होनी चाहिए ताकि बाहर की तरफ से आने वाले उभयचारी तथा सरीसृप आदि उसमें गिर कर ट्रैप हो जायें। नालियाँ थोड़ी-थोड़ी दूर पर सड़क से दूर ले जाकर निकास कर दी जानी चाहिए। नालियों से जल निकास सही रहने से सड़कों की दृढ़ता भी बनी रहती है।

(6) पैरापैट दिवारों में बड़े-बड़े छिद्र छोड़े जावें ताकि खतरे के समय इन छेदों से वन्य प्राणी बाहर निकाल कर अपना बचाव कर सकें ।

(7) आवारा कुत्तों को नगर परिषद् द्वारा हटाया जाना चाहिए ।

(8) सड़कों के पास बन्दर-लंगूरों व पक्षियों को दाना नहीं डाला जाना चाहिए । धार्मिक स्थलों को अधिक ट्रैफिक वाली सड़कों के पास स्थापित नहीं करना चाहिए ताकि चुग्गा स्थल की तरफ आते-जाते प्राणी मारे न जावें ।

(9) विभिन्न माध्यमों से जन-चेतना लाई जावे तथा जगह-जगह उचित डिजाइन कि ये बोर्ड प्रदर्शित किये जावें ।

कृतज्ञता-ज्ञापन

लेखक उन सभी लोगों का आभारी है जिन्होंने अध्ययन के दौरान सड़क पर दुर्घटनाग्रस्त प्राणियों की समय-समय पर सूचना दी ।

निर्देश

1. शर्मा, सतीश कुमार , विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका, 1988, 31(1), 43-53.

2. शर्मा, एस० के०, JBNHS, 1918, 85(1), 195-197.

3. वही, Newsletter For Bird Watchers 1990 30(5-6), 10-11.

4. वही, JBNHS (प्रकाशनाधीन)

Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

लैप्लास श्रेणी की चरम चेजारो संकलनीयता

सुशील शर्मा
गणित विभाग, शासकीय कालिदास बालिका महाविद्यालय, उज्जैन (म० प्र०)
तथा
एस० सी० पाटीदार
गणित विभाग, शासकीय महाविद्यालय, महीदपुर, उज्जैन (म० प्र०)

[प्राप्त—जुलाई 19, 1990]

सारांश

प्रस्तुत प्रपत्र में हमने लैप्लास श्रेणी की चरम चेजारो संकलनीयता पर एक नवीन प्रमेय सिद्ध किया है। हमारा प्रमेय डुप्लेसि तथा ब्यौहर एवं शर्मा के परिणामों का सार्वीकरण प्रस्तुत करता है।

Abstract

On absolute Cesaro summability of Laplace series. *By* Sushil Sharma, Department of Mathematics, Government Kalidas Girls College, Ujjain (M. P.) and S. C. Patidar, Department of Mathematics, Government College, Mahidpur, Ujjain (m. p.).

In the present paper, we prove a new theorem on absolute Cesaro summability of Laplace Series. Our theorem generalises the result of Duplesis[3] and Beohar and Sharma[2]. Results proved in this paper cover works done on this line after the survey article of Holland[5].

1. माना $f(\theta, \phi)$ एक फलन है जो एक गोलले S पर परास $0 \leqslant \theta \leqslant \pi$, $0 \leqslant \phi \leqslant 2\pi$ के लिए परिभाषित है। इस फलन के संगत लैप्लास श्रेणी है माना कि

$$f(x) \sim \frac{1}{2\pi} \sum_{n=0}^{\infty} (n+\tfrac{1}{2}) \iint_S f(\theta', \phi') \, P_n(\cos \omega) \sin \theta' \, d\theta' \, d\phi'$$

$$\equiv \sum_{n=0}^{\infty} U_n(\theta, \phi) \tag{1.1}$$

जहाँ

$$\cos \omega = \cos\theta \cos\theta' + \sin\theta \sin\theta \cos(\phi - \phi')$$

तथा $P_n(x)$ n^{th} nवाँ लीजेण्ड्र बहुपद है। हम काग्बे तलियांज का[6] अनुसरण करते हुए निम्नलिखित फलन को $f(\omega)$ द्वारा परिभाषित करते हैं

$$f(\omega) = \frac{1}{\sin 2\pi\omega} \int_{C\omega} f(\theta', \phi') \sin\theta' \, d\theta' \, d\phi' \tag{1.2}$$

जहाँ समाकल को लघुवृत्त के साथ लिया गया है जिसका केन्द्र गोले के पृष्ठ पर (θ, ϕ) है और जिसकी त्रिज्या ω है। अब (1.2) के आधार पर श्रेणी (1.1) निम्न रूप में समानीत हो जाती है–

$$\sum_{n=0}^{\infty} (n+\tfrac{1}{2}) \int_0^{\pi} f(\omega) P_n(\cos\omega) \sin\omega \, . \, d\omega. \tag{1.3}$$

हम लिखते हैं

$$T_n^{\alpha} = 1/A_n^{\alpha} \sum_{m=0}^{n} A_{n-m}^{\alpha-1} (2m+1) P_n(\cos\omega) \sin\omega$$

$$= 1/A_n^{\alpha} \sum_{m=0}^{\infty} A_{n-m}^{\alpha-2} \left[\frac{d}{dx} \left\{ P_m^{(x)} + P_{m+1}^{(x)} \right\} \right]_{x=\cos\omega}^{\sin\omega}$$

डुप्लेसिस[3] के लैप्लास श्रेणी की चेजारो संकलनीयता पर निम्नलिखित प्रमेय सिद्ध किया है।

प्रमेय A

यदि $-\frac{1}{2} < k < \frac{1}{2}$ तथा यदि $f(P)$ समाकलनीय है इकाई गोले पर तथा

$$F_P(\theta) = \int_0^{2\pi} f(\theta, \phi) \, d\phi \in \text{Lip*} \left(\tfrac{1}{2} - k\right)$$

जहाँ (θ, ϕ) निर्देशांक इस प्रकार चुने जाते हैं कि P पोल पर होता है तब f की लैप्लास श्रेणी (c, k) में संकलनीय है $f(P)$ का मान वाले बिन्दु पर।

ब्योहर[1] में लैप्लास श्रेणी की परम चेजारो संकलनीयता का अध्ययन किया है। उन्होंने दिखलाया है कि

प्रमेय B

यदि $f(\omega)$ बद्ध विचरण वाला हो (η, π) में जहाँ

$$\eta=\frac{\mu}{n^{\Delta}};\ \frac{2-\alpha}{1+\alpha}<\Delta<1,\ 1>\alpha<\tfrac{1}{2},$$

μ एक विशाल अचर है और यदि

$$F_1(t)\equiv\int_0^t |f(\omega)|\, d\omega=O(t^{1+2\alpha})$$

ज्यों-ज्यों $t\to 0$ तो श्रेणी (1.1) संकलनीय है

$$|c, \alpha+\tfrac{1}{2}|$$

प्रमेय C

यदि $f(\omega)$ बद्ध विचरण वाला हो (η, π) में जहाँ

$$\eta=\frac{\mu}{n^{\Delta}};\ 1>\Delta>\frac{1}{1+\beta-\alpha},\ 1>\beta>\alpha>\tfrac{1}{2},$$

μ विशाल अचर है और यदि

$$F_{\alpha}(t)=O(t^{1+\beta})$$

ज्यों-ज्यों $t\to 0$ तो श्रेणी (1.1) संकलनीय

$$|c, \alpha+\tfrac{1}{2}|$$

है ।

हम निम्नलिखित को सिद्ध करेंगे ।

प्रमेय

यदि $\{\lambda_n\}$ ऐसा अवमुख अनुक्रम है कि $\Sigma n^{-1}\lambda_n$ अभिसारी है तो श्रेणी $\Sigma\lambda_n U_n(\theta, \phi)$ संकलनीय $|c, \alpha|$ है गोले के बिन्दु (θ, ϕ) पर बशर्ते कि

$$f(\omega)\in \text{Lip}\left(\alpha-\frac{1}{p}\right)$$

जहाँ

$$0\leqslant\alpha\leqslant 1,\quad \alpha p>1,\quad p\geqslant 1$$

2. प्रमेय की उपपत्ति के लिए हमें निम्नलिखित प्रमेयिकाओं की आवश्यकता होगी ।

प्रमेयिका 1

$$0\leqslant\omega\leqslant\gamma_n \qquad \left(\gamma_n\geqslant\frac{1}{n}\right) \text{ के लिए}$$

के लिए

$$T_n^\alpha = O(n\omega)$$ (डुप्लेसिस के अनुसार[3])

प्रमेयिका 2

$\pi - n^{-1} \leqslant \omega \leqslant 2\pi$ के लिए

$T_n^\alpha = O\,(\sin\omega)$ (डु प्लेसिस के अनुसार[3])

प्रमेयिका 3

$\gamma_n \leqslant \omega \leqslant \pi - n^{-1}$, $\left(\gamma_n \geqslant \frac{1}{n}\right)$. के लिए

$$T_n^\alpha = R\{\psi(\omega)\,\omega^{-1/2} \,.\, e^{i(n+1\omega)}\} + O\{n^{-3/2}\,\omega^{-1}\,(\sin\omega)^{-1/2}\}$$
$$+ O\{n^{-2}\,(\sin\omega)^{-3/2}\} + O\{n^{-3/2}\,\omega^{-1/2}\,(\sin\omega)^{-1}\}$$

जहाँ

$$\psi(\omega) = O(n^{1/2-\alpha}\,\omega^{1-\alpha})$$

तथा

$$\psi(\omega + \mu_n) - \psi(\omega) = O\{n^{-3/2} \,.\, \omega^{-1} \,.\, \log n\}$$

(उपपत्ति के लिए डुप्लेसिस[3] को देखें)

प्रमेयिका 4

हम लिखते हैं

$$L_v^\alpha \; \frac{1}{A_n^\alpha} \sum_{k=0}^{v} A_{n-k}^{\alpha-1}\,(2k+1)\,P_k\,(\cos\omega)\sin\omega$$

तो

$0 \leqslant \omega \leqslant \gamma_n$ के लिए

$$L_v^\alpha \; O(v\omega)$$ (गुप्ता के अनुसार[4])

प्रमेयिका 5

$\pi - n^{-1} \leqslant \omega \leqslant \pi$ के लिए

$$L_v^\alpha = O(n^{-1}\,v\sin\omega)$$

(गुप्ता[4] के अनुसार)

प्रमेयिका 6

$\gamma_n \leqslant \omega \leqslant \pi - n^{-1}$ के लिए जहाँ $\left(\gamma_n \geqslant \frac{1}{n}\right)$

$$L_v^{\alpha} = R\{\phi(\omega)\ \omega^{-1/2} . e^{i(n+1)\omega}\} + O\{n^{-2} (\sin \omega)^{-3/2}\}$$

$$+ O\{n^{-1}\ v^{-1/2} . (\sin \omega)^{-1/2}\ \omega^{-1}\} + O\{n^{-1}\ v^{-3/2} .. (\sin \omega)^{-3/2}\}$$

$$+ O\{n^{-1}\ v^{-1/2}\ \omega^{-1/2} (\sin \omega)^{-1}\}$$

जहाँ

$$\Phi(\omega) = O(n^{1/2-\alpha}\ \omega^{1-\alpha})$$

तथा

$$\Phi(\omega+\mu_n) - \Phi(\omega) = O(n^{-3/2} . \omega^{-1} \log n)$$

(गुप्ता[4] के अनुसार)

3. प्रमेय की उपपत्ति

माना कि G_n^{α} n^{th} चेजारो माध्य है जो अनुक्रम

$$\{n\lambda_n\ U_n\ (\theta, \phi)\}$$

के क्रम α को द्योतित करता है। प्रमेय को सिद्ध करने के लिए हमें

$$\sum_{n=0}^{\infty} n^{-1}\ |G_n^{\alpha}|$$

के अभिसरण को ही प्रदर्शित करना है। अपने प्रमेय की उपपत्ति के लिए हम

$$\gamma_n = n^{-2/\alpha-1/p+2}$$

चुनेंगे।

अब

$$G_n^{\alpha} = \int_0^{\pi} f(\omega) \left(\frac{1}{A_n^{\alpha}} \sum_{v=0}^{n} A_{n-v}^{\alpha-1}\ (2v+1)\ \lambda_v . P_v (\cos \omega) \sin \omega \right) d\omega$$

$$= \left[\int_0^{\gamma_n} + \int_{\gamma u}^{\pi-1/n} + \int_{\pi-1/n}^{\pi} \right]$$

$$= I_1 + I_2 + I_3, \text{ माना}$$

अतः

$$\Sigma n^{-1}\ |G_n^{\alpha}| = \Sigma n^{-1}\ |I_1| + \Sigma n^{-1}\ |I_2| + \Sigma n^{-1}\ |I_3|$$

अब

$$I_1 = \int_0^{\gamma_n}\ f(\omega) \left(\frac{1}{A_n^{\alpha}} \sum_{v=0}^{n} A_{n-v}^{\alpha-1} . v . \lambda v(2v+1)\ P_v\ (\cos \omega) \sin\omega \right) d\omega.$$

$$=\int_0^{\gamma_n} f(\omega)\left[\sum_{v=0}^{n-1}\Delta(v\,.\,\lambda_v)\,L_v^{\alpha}+n\lambda_n\,.\,T_n{}^{\alpha}\right]d\omega$$

(प्रमेयिका 5 तथा अबेल रूपान्तर से)

$$=O\left[\int_0^{\gamma_n}\omega^{\alpha-1/p}\,.\left\{\sum_{v=0}^{n-1}\Delta(v\,\lambda_v)\,.\,v+n\,\lambda_n\,.\,n\right\}d\omega\right]$$

(प्रमेयिका 1 तथा 5 द्वारा)

$$=O\left[(\gamma_n)^{\alpha-1/p+2}\left\{\sum_{v=0}^{n-1}(v^2\,\Delta\lambda_v+v\,\lambda_v)+n^2\,\lambda_n\right]\right\}$$

$$\sum_{n=1}^{m} n^{-1}\,|I_1|=O\left[\sum_{n=1}^{m} n^{-1}\left(\frac{-2}{n^{\alpha-1/p+2}}\right)^{\alpha-1/p+2}\left\{\sum_{v=0}^{n-1}(v^2\,\Delta\lambda_v+v\,\lambda_v)+n^2\,\lambda_n\right\}\right]$$

$$=O\left[\sum_{v=0}^{m-1}(v^2\Delta\lambda_v+v\,\lambda_v)\sum_{n=1}^{m} n^{-3}\right]+O\left[\sum_{n=1}^{m} n^2\,.\,n^{-3}\,\lambda_n\right]$$

$$=O(1). \tag{3.1}$$

(देखें जेगो[7])

इसके आगे

$$I_3=\int_{\pi-1/n}^{\pi} f(\omega)\left[\sum_{v=0}^{n-1}\Delta(\lambda_v\,.\,v)\,L_v{}^{\alpha}+n\,\lambda_n\,.\,T_n{}^{\alpha}\right]d\omega$$

$$=O\left[\int_{\pi-1/n}^{\pi}\left\{\sum_{v=0}^{n-1}\Delta(v\,\lambda_v)\,n^{-1}\,v\sin\omega+n\,\lambda_n\sin\omega\right\}d\omega\right]$$

(प्रमेयिका 2 तथा 6 से)

$$\sin\left(\pi-\frac{1}{n}\right)\leqslant\frac{1}{n}$$ जहाँ n एक अत्यन्त लघु है

$$=O\left\{\sum_{v=0}^{n-1}(v^2\,\Delta\,\lambda_v+v\,\lambda_v)\,n^{-2}\right\}+O(\lambda_n)$$

इसलिए

$$\sum_{n=1}^{m} n^{-1}\,|I_3|=O\left[\sum_{n=1}^{m} n^{-3}\sum_{v=0}^{n-1}(v^2\,\Delta\lambda_v+v\,.\,\lambda_v)\right]$$

$$+O\left[\sum_{n=1}^{m} n^{-1}\lambda_n\right]$$

$$=O(1). \tag{3.2}$$

अन्त में हम विचार करेंगे

$$I_2=\int_{\gamma_n}^{\pi-1/n} f(\omega)\left(\frac{1}{A_n^{\alpha}}\sum_{v=0}^{n} A_{n-v}\,.\,v\,.\,\lambda_v\,(2v+1)\,P_v\,(\cos\omega)\sin\omega\right)d\omega.$$

$$=\int_{\gamma_n}^{\pi-1/n}\left(\sum_{v=0}^{n-1}\Delta(\lambda_v)\,L_v^{\alpha}+n\lambda_n\,T_n^{\alpha}\right)f(\omega)\,d(\omega).$$

अब प्रमेयिका 3 तथा 7 से हमें प्राप्त होगा

$$=\int_{\gamma_n}^{\pi-1/n}\sum_{v=0}^{n-1}\Delta(v\lambda v)\,\{R(\phi(\omega)\,\omega^{-1/2}\,.\,e^{i(n+1)\omega})\}\,f(\omega)\,d\omega.$$

$$+\int_{\gamma_n}^{\pi-1/n}\sum_{v=0}^{n-1}\Delta(v\lambda v)\,\{O(n^{-2}(\sin\omega)^{-3/2}+O(n^{-1}\,.\,v^{-1/2}\,(\sin\omega)^{-1/2}\,\omega^{-1})$$

$$+O(n^{-1}\,v^{-3/2}\,(\sin\omega)^{-3/2})+O(n^{-1}\,v^{-1/2}\,\omega^{-1/2}\,(\sin\omega)^{-1})\}\,|\,f(\omega)|\,d\omega.$$

$$+\int_{\gamma_n}^{\pi-1/n} n\lambda n\{R(\psi(\omega)\,\omega^{-1/2}\,.\,e^{i(n+1)\omega})\}\,|\,f(\omega)|\,d\omega.$$

$$+\int_{\gamma_n}^{\pi-1/n} n\lambda n\{O(n^{-3/2}\,.\,\omega^{-1}(\sin\omega)^{-1/2})+O(n^{-2}(\sin\omega)^{-3/2})$$

$$+O(n^{-3/2}\,.\,\omega^{-1/2}\,(\sin\omega)^{-1})\}\,|\,f(\omega)|\,d\omega.$$

$$=I_{2\cdot1}+I_{2\cdot2}+I_{2\cdot3}+I_{2\cdot4}+I_{2\cdot5}+I_{2\cdot6}+I_{2\cdot7}+I_{2\cdot8}+I_{2\cdot9},$$ माना

अब

$$I_{2\cdot2}=O\left[\int_{\gamma_n}^{\pi-1/n}\sum_{v=0}^{n-1}(v\Delta\lambda v+\lambda v)\,n^{-2}(\sin\omega)^{-3/2}\right]f(\omega)\,d\omega.$$

$$=O\left[\sum_{v=0}^{n-1}(v\Delta\lambda_v+\lambda_v)\,n^{-2}\left\{\int_{\gamma_n}^{\pi/2}\omega^{-3/2}\,d\omega+\int_{\pi/2}^{\pi-1/n}(\sin\omega)^{-3/2}\,d\omega\right\}\right]$$

$$=O\left[\sum_{v=0}^{n-1}(v\triangle\lambda_v+\lambda_v)\, n^{-3/2}\right]$$

इसलिए

$$\sum_{n=1}^{m} n^{-1}\,|I_{2\cdot 2}|=O\left[\sum_{n=1}^{m} n^{-5/2}\,.\,\sum_{v=0}^{n-1}(v\triangle\lambda_v+\lambda_v)\right]$$

$$=O\left[\sum_{v=0}^{m-1}(v\triangle\lambda_v+\lambda_v)\sum_{n=v+1}^{m} n^{-5/2}\right]$$

$$=O(1). \tag{3.3}$$

इसके आगे

$$I_{2\cdot 3}=O\left[\sum_{v=0}^{m}(v\triangle\lambda_v+\lambda_v)\, n^{-1}\, v^{-1/2}\left\{\int_{\gamma_n}^{\pi-2}\omega^{-3/2}\,d\omega+\int_{\pi/2}^{\pi-1/n}(\sin\omega)^{-1/2}\right\}\right]$$

अत:

$$\sum_{n=1}^{m} n^{-1}\,|I_3|=O\left[\sum_{n=1}^{m} n^{-3/2}\sum_{v=0}^{n-1}(v^{1/2}\triangle\lambda_v+v^{-1/2}\,.\,\lambda_v)\right]$$

$$=O(1). \tag{3.4}$$

$I_{2\cdot 4}$, $I_{2\cdot 5}$, $I_{2\cdot 7}$, $I_{2\cdot 8}$ तथा $I_{2\cdot 9}$ को इसी तरह सिद्ध कर सकते हैं ।

अब

$$I_{2\cdot 1}=R\left\{\int_{\gamma_n}^{\pi-1/n}\sum_{n=0}^{n-1}\triangle(v\lambda_v)\,\omega^{-1/2}\,\phi(\omega)\,.\,e^{i(n+1)\omega}\,.\,f(\omega)\,d\omega\right\}$$

अब समाकल

$$\int_{\gamma_n}^{\pi-n^{-1}}\omega^{-1/2}\,.\,\phi(\omega)\,f(\omega)\,e^{i(n+1)\omega}\,.\,d\omega$$

$$=\frac{1}{2}\left\{\int_{\gamma_n}^{\pi-n^{-1}}\omega^{-1/2}\,\phi(\omega)\,f(\omega)\,e^{i(n+1)\omega}\,.\,d\omega.\right.$$

$$\left.-\int_{\gamma_n-\mu_n}^{\pi-\mu_n-n-1}(\omega+\mu_n)^{-1/2}\,.\,\phi(\omega+\mu_n)\,f(\omega+\mu_n)\,e^{i(n+1)\omega}\,.\,d\omega\right\}$$

और यह मापांक में निम्नलिखित से कम है—

$$\frac{1}{2}\Big[\int_{\gamma_n-\mu_n}^{\pi_n} |f(\omega+\mu_n)\,\phi(\omega+\mu_n)\,(\omega+\mu_n)^{1/2}|\,d\omega$$

$$+\int_{\pi-n^{-1}-\mu_n}^{\pi-n^{-1}} |f(\omega)\,\phi(\omega).\,\omega^{-1/2}|\,d\omega$$

$$+\int_{\gamma_n}^{\pi-n^{-1}-\mu_n} |f(\omega+\mu_n)-f(\omega)|\,|\phi(\omega+\mu_n)|\,(\omega+\mu_n)^{-1/2}\,d\omega$$

$$+\int_{\gamma_n}^{\pi-n^{-1}-\mu_n} |\phi(\omega\omega+\mu_n)-\phi(\omega)|\,|f(\omega)|\,(\omega+\mu_n)^{1/2}\,d\omega$$

$$+\int_{\gamma_n}^{\pi-n-\mu_n} |(\omega+\mu_n)^{-1/2}-\omega^{1/2}|\,|f(\omega)|\,|\phi(\omega)|\,d\omega\Big]$$

जहाँ

$$\mu_n=\pi/(n+1)$$

$$=\frac{1}{2}\,[J_1+J+J_3+J_{42}+J_5] \text{ माना}$$

अब

$$J_1=O(\mu_n\,.\,n^{1/2-\alpha}\,.\,\gamma^{1-\alpha}{}_n\,.\,\gamma^{-1/2}{}_n)$$

$$=O(n^{-1/2}\,.\,n^{1/2-\alpha}\,.\,n^{\alpha-1}\,.\,n^{1/2})=O(n^{-1})$$

$$J_2=O(\mu_n)$$

$$J_3=O(\mu^{\alpha-1/p}\,.\,n^{1/2-\alpha}\,.\,\gamma^{3/2-\alpha}{}_n)$$

(ब्यौहर तथा शर्मा[2] का अनुसरण करते हुए)

$$=O(n^{-2\alpha+1/p+1/2}\,.\,(\gamma_n)^{1/2-\alpha})$$

$$J_4=O\left(n^{-3/2}\,.\log n\int_{\gamma_n}^{\pi}\omega^{-1}\,\omega^{\alpha-1/p}\,\omega^{-1/2}\,d\omega.\right.$$

$$=O(n^{-3/2}\,.\log n\,.\,(\gamma_n)^{-1/2+\alpha-1/p})$$

$$J_5=O\left(\mu_n\int_{\gamma_n}^{\pi}\omega^{-3/2}\,.\,n^{1/2-\alpha}\,.\,\omega^{1-\alpha}\right)$$

$$=O(\mu_n\,.\,n^{1/2-\alpha}\,.\,\gamma_n{}^{-\alpha+1/2})=O(n^{-1})$$

अत:

$$\sum_{n=1}^{m} n^{-1}|I_{2\cdot1}| \leqslant \sum_{n=1}^{m} n^{-1} \sum_{v=0}^{n-1} \Delta(\nu\lambda_v)\{J_1+J_2+J_3+J_4+J_5\}$$

$$=\Sigma_1+\Sigma_2+\Sigma_3+\Sigma_4+\Sigma_5,$$

माना अब

$$\Sigma_1=O\left(\sum_{n=1}^{m} n^{-1} \sum_{v=0}^{n-1} \Delta(\nu\lambda_v)\, n^{-1}\right)$$

$$=O\left(\sum_{v=0}^{m-1} (\nu\Delta\lambda_v+\lambda_v) \sum_{n=v+1}^{m} n^{-2}\right)$$

$$=O(1). \tag{3.5}$$

$$\Sigma_2=O\left\{\sum_{v=0}^{m-1} (\nu\Delta\lambda_v+\lambda_v) \sum_{n=v+1}^{m} n^{-3/2-\alpha}\right\}$$

$$=O(1). \tag{3.6}$$

$$\Sigma_3=O\left\{\sum_{v=0}^{m-1} (\nu\Delta\lambda_v+\lambda_v) \sum_{n=v+1}^{m} n^{-2\alpha+1/p-1/2}\,(\gamma_n)^{3/2-\alpha}\right\}$$

$$=O(1). \tag{3.7}$$

इसी प्रकार

$$\Sigma_4=O(1). \tag{3.8}$$

तथा

$$\Sigma_5=O(1). \tag{3.9}$$

$I_{2\cdot6}$ में समाकल का क्रम वही होगा जो कि $I_{2\cdot1}$ में समाकल का क्रम है

$$\sum_{n=1}^{m} n^{-1}|I_{2\cdot6}| \leqslant \sum_{n=1}^{m} n^{-1}(n\,.\,\lambda_n)\{J_1+J_2+J_3+J_4+J_5\}$$

$$=G_1+G_2+G_3+G_4+G_5,$$ माना

अब

$$G_1=O\left(\sum_{n=1}^{m} \lambda_n\,.\,n^{-1}\right)=O(1). \tag{3.10}$$

$$G_2=O\left(\sum_{n=1}^{m} \lambda_n \cdot n^{-1/2-\alpha}\right)=O(1). \tag{3.11}$$

$$G_3=O\left(\sum_{n=1}^{m} \lambda_n \cdot n^{-2\alpha+1/p+1/2} (\gamma_n)^{3/2-\alpha}\right)$$

$$=O(1). \tag{3.12}$$

$$G_4=O\left(\sum_{n=1}^{m} \lambda_n \cdot n^{-3/2} \cdot \log n(\gamma_n)^{-1/2+\alpha-1/p}\right)=O(1) \tag{3.13}$$

$$G_5=O\left(\sum_{n=1}^{m} \lambda_n \cdot n^{-1}\right)=O(1). \tag{3.14}$$

इस प्रकार

$$I_2=O(1). \tag{3.15}$$

इस तरह प्रमेय की उपपत्ति पूरी हुई ।

कृतज्ञता-ज्ञापन

लेखकद्वय प्रो० एच० एम० श्रीवास्तव को इस प्रपत्र के विषय में सुझाव देने के लिए धन्यवाद देते हैं ।

निर्देश

1. ब्यौहर, वी० के०, **Riv. Math. Univ. Parma,** 1967, 8(2), 197-203.
2. ब्यौहर वी० के० तथा शर्मा, सुशील, **Indian J. Pure and Appl. Maths.**, 1979, **10(9)**, 1151-1156.
3. डुप्लेसिस, एन०, **J. London Math Soc.**, 1927, 337-52.
4. गुप्ता, डी० पी०, **Proc. Nat. Inst. Soc. of India,** 1958, **24**, 419-440.
5. हालैंड, ए० एस० बी०, **C. I. A. M. Review,** 1981, **23**(3), 344-379.
6. कागबेतलियांज, ई०, **Journ de Math,** 1924, (9), 3 107-187.
7. जेगो, जी०, **Amer Math· Soc. Collog. Publ. New York.** 1959, XXIII., 166.

Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

फूरियर श्रेणी की परम हौसडार्फ संकलनीयता

बी० एल० गुप्ता तथा कुमारी पद्मावती
गणित विभाग, शासकीय इंजीनियरी कालेज, रायपुर (म० प्र०)

[प्राप्त—अक्टूबर 25, 1990]

सारांश

प्रस्तुत प्रपत्र का उद्देश्य निम्नलिखित को सिद्ध करना है—

प्रमेय I :

(H, μ_n) संरक्षी है तथा या तो

$(a)\ \chi(x) = g^{-}_{1+\epsilon} + C;\ \epsilon > 0$

अथवा

$(b)\ \chi(x) = g^{+}_{1+\epsilon} + C:\ \epsilon > 0$

किसी $g(x) \in L(0. 1)$ के लिए, यदि

$$\Sigma \frac{1}{k} w\left(\frac{1}{k}\right) < \infty$$

तो फूरियर श्रेणी

$$\frac{a_0}{2} + \sum_{n=1}^{\infty} (a_n \cos nt + b_n \sin nt) = \sum_{n=0}^{\infty} A_n(t)$$

संकलनीय $|H, \mu_n|$ है जहाँ C एक चरम अचर है ।

Abstract

On the absolute Hausdorff summability of Fourier Series. *By* B. L. Gupta and Miss Pudmavati, Department of Mathematics, Government Engineering College, Raipur (M. P.).

The object of this paper is to prove the following :

Theorem I :

(H, μ_n) conservative and either

(a) $\chi(x)=g^{-}_{1+\epsilon}+C\,;\ \epsilon>0\,;$

or (b) $\chi(x)=g^{+}_{1+\epsilon}+C\,;\ \epsilon>0\,;$

for some $g(x)\epsilon L\ (0, 1)$, if

$$\Sigma \frac{1}{k}\, w\left(\frac{1}{k}\right)<\infty,$$

then the Fourier series $\frac{ab}{1}+\sum_{n=0}^{\infty}(a_n \text{ Cos}\, nt+b_n \text{ Sin}\, nt)=\sum_{n=0}^{\infty} \text{An}\ (t)$ is summable $|H, \mu_n|$ where C is an absolute constant.

1. माना कि S_n किसी अनन्त श्रेणी Σa_n का n वाँ आंशिक योग फल है तथा माना कि

$$t_n=\sum_{v=0}^{n}\binom{n}{v}(\Delta^{n-v}\,\mu_v)\,S_v, \tag{1.1}$$

तो अनुक्रम $\{t_n\}$ को अनुक्रम $\{S_n\}$ का हौसडार्फ माध्य कहा जाता है जहाँ $\{\mu_n\}$ कोई ऐसा वास्तविक अनुक्रम है कि

$$\Delta^0\,(\mu_n)=\mu_n \text{ तथा } \Delta^p\,(\mu_n)=\Delta^{p-1}\,(\mu_n)-\Delta^{p-1}\,(\mu_{n+1})$$

श्रेणी Σa_n को योगफल S तक हौसडार्फ माध्य के द्वारा संकलनीय कहा जाता है यदि

$$\lim_{n\to\infty}\ t_n\to S$$

जब भी $S_n\to S$.

हौसडार्फ संकलनीयता को संरक्षी (conservative) होने के लिए आवश्यक तथा पर्याप्त प्रतिबन्ध यह है कि अनुक्रम $\{\mu_n\}$ को आघूर्ण अर्थात्

$$\mu_n=\int_0^1 x^n\, d\,\chi\,(x),\ (n\geqslant 0).$$

का अनुक्रम होना चाहिए जहाँ $\chi(x)$ वास्तविक फलन है जो $0\leqslant x\leqslant 1$ में परिबद्ध विचरण वाला है।

सामान्यता की हानि के बिना हम यह कल्पना कर सकते हैं कि $\chi(0)=0$ और यदि $\chi(1)=1$ तथा $\chi(+0)=\chi(0)=0$, जिससे कि $\chi(x)$ मूलबिन्दु पर संतत हो तो μ_n एक नियमित आघूर्ण अचर है और (H, μ_n) एक नियमित संकलन विधि है।[1]

यदि

$$\Sigma|(t_n-t_{n-1})|<\infty \tag{1.2}$$

तो श्रेणी Σa_n को परम संकलनीय (H, μ_n) अथवा संकलनीय $|H, \mu_n|$ कहा जाता है। यह ज्ञात है कि संकलन की होल्डर तथा यूलर विधियाँ उपर्युक्त विधि की विशिष्ट दशायें हैं।

2. माना कि $f(t)$ एक आवर्ती फलन है जिसका आवर्त 2π है और $(-\pi, \pi)$ में लेबेस्क के अर्थ में समाकलनीय है। माना कि इसकी फूरियर श्रेणी निम्नवत् है—

$$\frac{a_0}{2} + \sum_{n=1}^{\infty} (a_n \cos nt + b_n \sin nt) = \sum_{n=0}^{\infty} A_n((t) \tag{2.1}$$

हम लिखेंगे—
$$\phi(t) = \frac{1}{2} \{f(\theta+t) + f(\theta-t) - 2f(\theta)\}.$$

इसके आगे, माना कि फलन $g(x)$ लेबेस्क समाकलनीय है $(0, 1)$ में तो $\epsilon > 0$ के लिए

$$g^+_\epsilon(x) = \frac{1}{\epsilon!} \int_o^x (x-u)^{\epsilon-1} g(u)\, du$$

$$g^-_\epsilon(x) = \frac{1}{\epsilon!} \int_x^1 (u-x)^{\epsilon-1} g(u)\, du.$$

पुनः माना कि
$$U_n(t) = \sum_{v=1}^{n} e^{ivt}$$

$$H(n, x, t) = E(n, x, t) + i\, F(n, x, t).$$

$$= \sum_{v=1}^{n} \binom{n}{v} x^v (1-x)^{n-v} e^{ivt}.$$

माना कि $f(x)$ को बद्ध आन्तरिक I में परिभाषित किया जाय तथा माना कि

$$w(\delta) = \sup | f(x_2) - f(x_1)|,$$

$x_1, x_2 \epsilon I$ एवं$x_2 - x_1| < \delta$ के लिये तो $w(\delta)$ को f का सांतत्य मापांक (modulus of continuity) कहा जाता है। हम देखते हैं कि

$$0 \leqslant w(\delta) \leqslant w(\delta_1);\ 0 \leqslant \delta \leqslant \delta_1.$$

हम यह भी देखते हैं कि $\phi(t)$ सम है तथा

$$|\phi(t)| \leqslant 2w(t),\ t \geqslant 0 \text{ के लिए।}$$

3. प्रस्तुत प्रपत्र का उद्देश्य निम्नांकित को सिद्ध करना है—

प्रमेय I.

(H, μ_n) संरक्षी है तथा या तो

(a) $$\chi(x) = g^-_{1+\epsilon} + C;\ \epsilon > 0; \tag{3.1}$$

अथवा

(b) $$X(x) = g^+_{1+\epsilon} + C;\ \epsilon > 0; \tag{3.2}$$

किसी $g(x) \epsilon L(0, 1)$ के लिए, यदि

$$\Sigma \frac{1}{k} w\left(\frac{1}{k}\right) < \infty.$$

तो (2.1) समाकलनीय $|H, \mu_n|$ है जहाँ C चरम अचर है।

4. यह भी बतला दिया जाय कि यदि

$$\chi(x)=1-(1-x)^{\delta},\ \delta>0;$$

तो विधि (H, μ_n) δ कोटि की संकलन की चेजारो विधि में समानीत हो जाती है।

यही नहीं, यदि हम $\delta>\epsilon$ चुनें तो यह सिद्ध किया जा सकता है कि $\chi(x)-1$ $(1+\epsilon)$ वाँ पश्च समाकल है

$$-\frac{1+\delta!}{\delta-\epsilon!}(1-x)^{\delta-\epsilon-1},$$

का तथा $\epsilon<1$, $\delta>\epsilon$ के लिये $\chi(x)$ भी $(1+\epsilon)$ वाँ अग्र समाकल है

$$-(1-\delta)\,\delta\int_0^x (1-v)^{\delta-2}\,(x-v)^{-\epsilon}\,dv,$$

का जिससे कि विधि $|C, \delta|$ क्योंकि $\epsilon>0$, $\delta<\epsilon$ द्वारा प्रमेय I की संकल्पना तुष्ट हो जाती है।

नीचे दिया गया प्रमेय प्रमेय I का उपप्रमेय बन जाता है।

प्रमेय II

यदि $\Sigma w(1/k)/k<\infty$ $f(x)$ की फूरियर श्रेणी संकलनीय $|C, \delta|$ है $\delta>0$ के लिए जहाँ $w(t)$ सांतत्य मापांक है।

चूँकि $w(t)$ से Lip(α) का बोध होता है अतः हिस्लाप की निम्नलिखित प्रमेय[2] हमारे प्रमेय II की विशिष्ट दशा बन जाती है।

प्रमेय

यदि $f(x)\in$ Lip α, जहाँ $0<\alpha<1/2$, तो $f(x)$ की फूरियर श्रेणी संकलनीय $|C, \beta|$ है, x के समस्त मानों के लिए यदि $\alpha+\beta>1/2$.

4. अपने मुख्य प्रमेय I की उपपत्ति के लिए हमें निम्नलिखित प्रमेयिकाओं की आवश्यकता होगी।

प्रमेयिका 1

$0<t\leqslant\pi$ में सम रूप से

$$|U_n(t)|\leqslant\frac{k}{t}. \tag{4.1}$$

इसे सरलता से सिद्ध किया जा सकता है।

प्रमेयिका 2

यदि $g(x)$ तथा $h(x)$ $(0, 1)$ में लेबेस्क समाकलनीय हो तो $\epsilon>0$ के लिए

$$\int_0^1 g^{+}{}_{\epsilon}(x)\, h(x)\, dx=\int_0^1 g(x)\, h^{-}{}_{\epsilon}(x)\, dx.$$

यह कुट्टनर का परिणाम है।[3]

प्रमेयिका 3

$0\leqslant x\leqslant t$ में समरूप से

$$\int_0^x H(n, v, t)\, dv=0\left(\frac{A}{t}\right). \tag{4.2}$$

उपपत्ति

माना

$$J=\int_0^x H(n, v, t)\, dv.$$

आबेल रूपान्तर द्वारा हमें निम्न की प्राप्ति होती है—

$$J=\int_0^x \sum_{v=1}^{n} U_v(t)\, \Delta \left| \binom{n}{v} v^v(1-v)^{n-v}\, dv\right\}$$

माना

$$a_v=v,\ b_v=\binom{n}{v}\int_0^x v^v(1-v)^{n-v}\, dv.$$

$$\therefore\ |J|\leqslant\frac{k}{t}\sum_{v=1}^{\infty}|\Delta(a_v\, b_v)|.$$

खण्डशः समाकलित करने पर हमें

$$b_{v+1}(x)=-\frac{1}{v+1}\binom{n}{v}x^{v+1}(1-x)^{n-v}+b_v(x)$$

$$\leqslant b_v(x).$$

प्राप्त होगा जिससे कि स्थिर x के लिए $b_v(x)$ एक ह्रासमान फलन है v का। चूंकि $\{a_v\}$ वर्धमान अनुक्रम है अतः

$$|\Delta(a_v\, b_v)|=|a_v\, \Delta b_v+b_v\Delta a_v|$$

$$\leqslant|a_v\Delta b_v|+|b_{v+1}\Delta a_v|$$

$$\leqslant a_c\Delta b_v-b_{v+1}\Delta a_v.$$

अतः

$$\Sigma|\Delta(a_v b_v)| \leqslant a_n \sum_{v=1}^{n} \Delta b_v - \sum_{v=1}^{n} b_{v+1} \Delta a_v$$

$$\leqslant a_n \sum_{v=1}^{n} \Delta b_v - b_0 \sum_{v=1}^{n} \Delta a_v$$

$$\leqslant 2\, a_n\, b_0$$

$$\leqslant 2n \int_0^x (1-v)^n\, dv$$

$$\leqslant 2\, n \left[-\frac{(1-v)^{n+1}}{n+1} \right]_0^x$$

$$\leqslant \frac{2n}{n+1} [1-(1-x)^{n+1}]$$

इससे प्रमेयिका की उपपत्ति पूर्ण होती है।

प्रमेयिका 4

यदि $\epsilon > 0$, तो

$$\int_0^x (x-u)^{\epsilon} H(n, u, t)\, du = 0 \left(\frac{n^{-\epsilon}}{t^{\epsilon+1}} \right) \tag{4.3}$$

तथा

$$\int_x^1 (u-x)^{\epsilon} H(n, u, t)\, du = 0 \left(\frac{n^{-\epsilon}}{t^{\epsilon+1}} \right) \tag{4.4}$$

$0 \leqslant x \leqslant 1$ में समान रूप से।

उपपत्ति : चूंकि

$$|H(n, x, t)| \leqslant n \sum_{v=0}^{n} \binom{n}{v} x^v (1-x)^{n-v}$$

$$= n.$$

अतः हमें निम्नलिखित परिणाम प्राप्त होता है—

$$\left| \max \int_{(0,\ x-1/nt)}^{x} (x-u)^{\epsilon} H(n, u, t)\, du \right|$$

$$\leqslant A.\, n. \int_{x-1/nt}^{x} (x-u)^{\epsilon}\, du$$

$$\leqslant A.\, n. \left[\frac{(x-u)^{\epsilon+1}}{\epsilon+1}\right]_{x-1/n.}^{x}$$

$$\leqslant A^{*} \quad \frac{n^{-\epsilon}}{t^{\epsilon+1}}$$

यदि $x \leqslant \frac{1}{nt}$ तो प्रमेयिका सिद्ध हो जाती है।

यदि $x > \frac{1}{nt}$ तो यह सिद्ध करना शेष रह जाता है कि

$$S = \int_{0}^{x-1/nt} (x-u)^{\epsilon} H(n, u, t)\, du = 0 \left(\frac{n^{-\epsilon}}{t^{\epsilon+1}}\right).$$

खण्डशः समाकलन करने पर

$$S = \int_{0}^{x-1/nt} (x-u)^{\epsilon} H(n, u, t)\, du$$

$$= \left[(x-u)^{\epsilon} \int_{0}^{u} H(n, v, t\ )dv\right]_{0}^{x-1/nt} - \epsilon \int_{0}^{x-1/nj} (x-u)^{\epsilon-1}$$

$$\left\{\int_{0}^{u} H(n, v. t)\, dv\right\} du$$

$$\leqslant A \frac{n^{-\epsilon}}{t^{\epsilon+1}},$$ (प्रमेयिका 3 से)

इससे प्रमेयिका की उपपत्ति पूर्ण हो जाती है।

5. प्रमेय I की उपपत्ति

यदि t_n तथा u_n सूचित करते हैं $\Sigma A_n(\theta)$ के हौसडार्फ माध्य तथा अनुक्रम $\{n\, A_n\, (\theta)\}$ को, तो $n \geqslant 1$ के लिये

A. यहच्छिक अचर है जिसका मान विभिन्न स्थानों पर भिन्न होता है

$$u_n = n(t_n - t_{n-1}).$$

(1.2) से श्रेणी $\sum_{n=1}^{\infty} A_n(\theta)$

संकलनीय $|H, \mu_n|$ है।

यदि

$$I = \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \left| \sum_{v=0}^{n} \binom{n}{v} (\Delta^{n-v} \mu_v) \, v A_v(\theta) \right| < \infty.$$

चूंकि (H, μ_n) संरक्षी है अतएव

$$I = \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \left| \int_0^1 d\chi(x) \sum_{v=0}^{n} \binom{n}{v} x^v (1-x)^{n-v} \, v A_v(\theta) \right|$$

$$= \frac{2}{\pi} \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \left| \int_0^1 d\chi(x) \sum_{v=0}^{n} \binom{n}{v} x^v (1-x)^{n-v} v \int_0^{\pi} \phi(t) \cos vt \, dt \right|$$

$$\leqslant A \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \int_0^{1/n} |\phi(t)| \left| \int_0^1 d\chi(x) \sum_{v=0}^{n} \binom{n}{v} x^v (1-x)^{n-v} v \cos vt \, dt \right|$$

$$+ A \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \int_{1/n}^{\pi} |\phi(t)| \left| \int_0^1 d\chi(x) \sum_{v=0}^{n} \binom{n}{v} x^v (1-x)^{n-v} v \cos vt \, dt \right|$$

$$= I_1 + I_2 \text{ (माना)}$$

चूंकि $\quad |H(n, x, t)| \leqslant A \, . \, n \left| \sum_{v=0}^{\infty} \binom{n}{v} x^v (1-x)^{n-v} \right|$

$$= A \, . \, n.$$

हमें ज्ञात है कि

$$I_1 \leqslant A \sum_{n=1}^{\infty} \int_0^{1/n} w(t) \int_0^1 |d\chi(x)| \, dt$$

$$\leqslant A \sum_{n=1}^{\infty} w\left(\frac{1}{n}\right) \int_0^{1/n} dt$$

$$\leqslant A \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \, w\left(\frac{1}{n}\right)$$

$$< \infty.$$

सामान्यता की हानि के बिना यदि $\chi(x) = g^{-}{}_{1+\epsilon}(x) + C$, जैसा कि हमारे प्रमेय में (a) है,

$$I_2 = A \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \int_{1/n}^{\pi} |\phi(t)| \, \left| \int_0^1 g^{-}{}_{1+\epsilon}(x) \; E\,(n,\, x,\, t)\; dx \, \right| dt$$

$$= A \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \int_{1/n}^{\pi} |\phi(t)| \, \left| \int_0^1 g(x) \; E^{+}{}_{1+\epsilon}\,(n,\, x,\, t) \; dx \right| dt.$$

चूंकि

$$E^{+}_{1+\epsilon} \;\; (n,\, x,\, t) = \frac{1}{\overline{1+\epsilon}!} \int_0^x (x-u)^{\epsilon} \, E(n,\, u,\, t) \; du$$

$$= \frac{1}{\overline{1+\epsilon}!} \int_0^x (x-u)^{\epsilon} \, I_m \;\; H(n,\, u,\, t) \; du)$$

$$= 0\left(\frac{n^{-\epsilon}}{t^{1+\epsilon}}\right), \qquad \text{(प्रमेयिका 3 से)}$$

अतः

$$I_2 \leqslant A \int_0^1 |g(x)| \; dx \sum_{n=1}^{\infty} \frac{1}{n} \int_{1/n}^{\pi} |\phi(t)| \; \frac{n^{-\epsilon}}{t^{1+\epsilon}} \; dt$$

$$= A \int_0^1 |g(x)| \; dx \sum_{n=1}^{\infty} n^{-1-\epsilon} \int_{1/n}^{\pi} \frac{w(t)}{t^{1+\epsilon}} \; dt$$

$$= A \int_0^1 |g(x)| \; dx \sum_{n=1}^{\infty} n^{-1-\epsilon} \int_{1/n}^{\pi} \frac{w(t)}{t^{1+\epsilon}} \, dt$$

$$= A \sum_{n=1}^{\infty} n^{-1-\epsilon} \int_{1/\pi}^{n} \frac{w(1/t)}{t^{1-\epsilon}} \; dt$$

$$= A \sum_{n=1}^{\infty} n^{-1-\epsilon} \sum_{k=0}^{n} \frac{w(1/k)}{k^{1-\epsilon}}$$

$$=A \sum_{k=1}^{\infty} \frac{w(1/k)}{k^{1-\epsilon}} \sum_{n=k}^{\infty} \frac{1}{n^{1+\epsilon}}$$

$$\leqslant A \sum_{k=1}^{\infty} \frac{w(1/k)}{k^{1-\epsilon}} \frac{1}{k^{\epsilon}}$$

$$\leqslant A \sum_{k=1}^{\infty} \frac{1}{k}\, w\left(\frac{1}{k}\right)$$

$$<\infty.$$

यदि (b) $\chi(x)=g^{+}_{1+\epsilon}(x)+C)$ तो (a) की ही तरह बढ़ते हुए तथा प्रमेयिका 4 ये आकलन (4.4) का प्रयोग करने पर यह सिद्ध किया जा सकता है कि

$$I_2 < \infty.$$

इस तरह प्रमेय की उपपत्ति पूरी हो जाती है।

निर्देश

1. हार्डी, जी० एच०, Divergent Series, आक्सफोर्ड 1949.
2. हिस्लाप, जे० एम०, Proc. Lond. Math. Soc., 1937, (2) 43, 475-83.
3. कुट्टनर, बी०, Jour. Lond. Math. Soc., 1952, **27**, 207-217.

Vijnana Parishad Anusandhan Patrika, Vol. 35, No. 1, 1992

फूल गोभी के बीजोत्पादन पर जिबरेलिक अम्ल का प्रभाव

बनारसी यादव, राम प्रताप सिंह, राघवेन्द्र सिंह तथा भानु प्रकाश श्रीवास्तव*
आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

[प्राप्त—फरवरी 8, 1991]

सारांश

फूलगोभी की "स्नोबाल" प्रजाति के पुष्पीय भाग पर जिबरेलिक अम्ल के प्रयोग से बीजोत्पादन में महत्वपूर्ण बढ़ोत्तरी पायी गयी। विलयन की विभिन्न सान्द्रताओं के प्रभाव का अध्ययन करने के उद्देश्य से फूलगोभी के फूल को जिबरेलिक अम्ल की चार विभिन्न सान्द्रताओं (50, 100, 200 एवं 300 पी० पी० एम०) के विलयन से उपचारित किया गया। बीजोत्पादन एवं उसके विभिन्न कारकों का सांख्यिकीय संगणन किया गया। जिबरेलिक अम्ल का प्रभाव बीजोत्पादन में महत्वपूर्ण परन्तु सांद्रता-विशिष्ट प्रभाव दिखा। 100 पी० पी० एम० सान्द्रता का विलयन सर्वाधिक प्रभावी रहा किन्तु सान्द्रता बढ़ने के साथ इसका प्रभाव क्रमशः घटता गया।

Abstract

Effect of gibberelic acid on seed-yield of cauliflower. *By* B. Yadav, R. P. Singh, R. Singh and B. P. Srivastava, Department of Genetics and Plant Breeding, Institute of Agricultural Sciences, Banaras Hindu University, Varanasi.

Application of gibberellic acid (GA) on the floral part of the cauliflower (*Brassica obracea* L.) var. Snowball, was noted to be associated with significant increase in seed yield per plant. With a view to study the effect and efficiency of concentration, the head of cauliflower was treated with 50, 100, 200 and 300 ppm gibberellic acid solution. Data on seed yield per plant and yield attributing traits were recorded and statistically analysed. The application of gibberellic acid recorded a significant but concentration-specific improvement in seed yield per plant. Maximum efficiency was observed at 100 ppm and it decreased with increase in concentration.

---

*कवक एवम् पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

पौधों के विभिन्न वानस्पतिक भागों के प्रजनन अंगों में परिवर्तन की ओर वनस्पतिविदों का ध्यान लगभग उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य से आकर्षित हुआ। सर्वप्रथम जूलियस सैक[1] ने यह बताया कि पौधों में कुछ ऐसे अवयव हैं जो इनके विभिन्न अंगों के निर्माण में सहायक होते हैं। गर्नर तथा गेलार्ड[2] द्वारा पौधों में प्रकाशदीप्ति काल की खोज ने पुष्प कार्यिकी को एक नई दिशा प्रदान की, और तभी से इस दिशा में अनेक कार्य हुए[3, 4, 5, 6]। चालिक्यान[6] के अनुसार वर्तमान में अन्वेषित कुल चार हारमोन पादप कार्यिकी में मुख्य भूमिका अदा करते हैं—(1) आक्सीन (2) काईनिन तथा न्यूक्लिक एसिड मेटाबोलाइट (3) जिबरेलिन एवं (4) एन्थेसिन मेटाबोलाइट जो पौधों में पुष्पोत्पत्ति के लिए आवश्यक हैं।

यद्यपि जिबरेलिक अम्ल का प्रयोग एवम् उसका अध्ययन बहुत सी फसलों पर हुआ, परन्तु फूलगोभी एक महत्वपूर्ण सब्जी फसल पर इसका अध्ययन बहुत ही कम और प्रारम्भिक स्तर का है[3, 6, 6, 8]। प्रस्तुत शोध-पत्र में फूल गोभी की स्नोबाल प्रजाति पर जिबरेलिक अम्ल की चार विभिन्न सान्द्रताओं के प्रभाव का अध्ययन किया गया है।
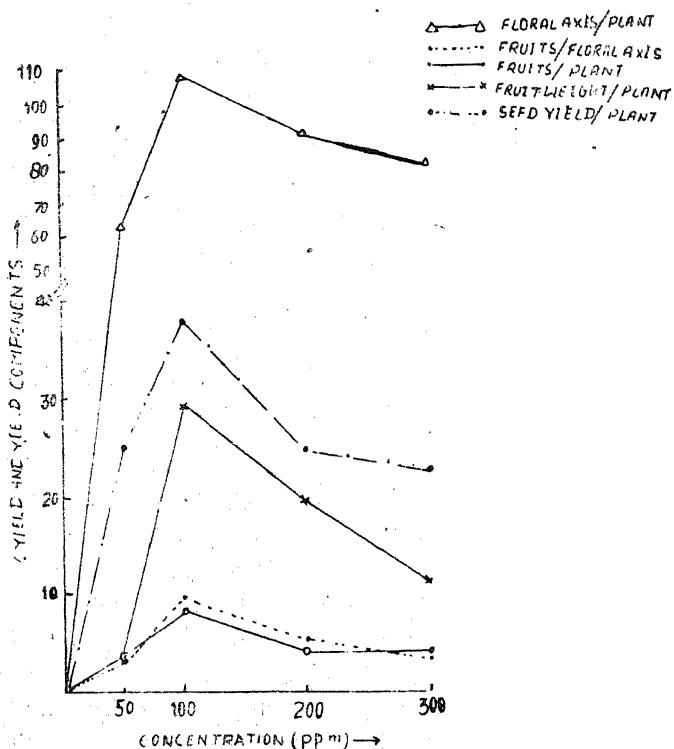
चित्र 1 : फूल गोभी पर जिबरेलिक अम्ल के प्रयोग से बीजोत्पादन एवं उसके प्रमुख कारकों पर प्रभाव, अनुपचारित के सापेक्ष (%)

प्रयोगात्मक

प्रयोगात्मक अध्ययन हेतु फूलगोभी की स्नोबाल प्रजाति पर जिबरेलिक अम्ल की चार विभिन्न सान्द्रताओं (50, 100, 200 एवम् 300 पी० पी० एम०) का प्रयोग किया गया। 2:1 के अनुपात में कम्पोस्ट खाद एंवम् मिट्टी के मिश्रण वाले अच्छे प्रक्षेत्र में प्रतिरोपित स्वस्थ गोभी के पौधों को जिबरेलिक अम्ल के उपचार हेतु लिया गया। फूलगोभी के पुष्पीय भाग पर विभिन्न सान्द्रताओं के जिबरेलिक अम्ल के विलयन का छिड़काव 20 दिनों के अन्तर पर दो बार किया गया। पहली बार में प्रत्येक सान्द्रता के विलयन का 20 मिली० प्रति पाँच पौध की दर से प्रयोग किया गया तथा दूसरी बार 30 मिली० का। अनुपचारित पौधों पर भी उतनी ही मात्रा में आसुत जल का छिड़काव उसी समय एवं उसी समयान्तर पर किया गया। प्रक्षेत्र पर अच्छे फसलोत्पादन के लिए सभी आवश्यक शस्य-क्रियायें की गयीं। प्रयोग की दृष्टि से, फूल लगने में लगा समय, पुष्पाक्षों की संख्या प्रति पौध, फलियों का संख्या प्रति पुष्पाक्ष, फलियों की संख्या प्रति पौध, फलियों का भार प्रति पौध एवं बीजोत्पादन प्रति पौध पर आँकड़े लेकर उनका संगणन किया गया।

परिणाम तथा विवेचना

फूलगोभी पर जिबरेलिक अम्ल का उपचार करने से यह ज्ञात होता है कि इसका प्रभाव महत्वपूर्ण परन्तु सान्द्रता विशिष्ट है (चित्र 1)। विभिन्न सान्द्रताओं में 100 पी० पी० एम० पर सबसे अधिक बीजोत्पादन पाया गया, जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि उचित सान्द्रता ही अधिक बीजोत्पादन के लिए महत्वपूर्ण है।
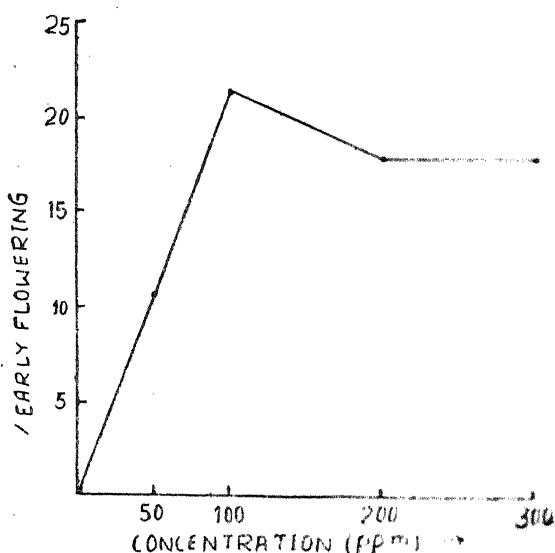
चित्र 2 : फूल गोभी पर जिबरेलिक अम्ल के प्रयोग से फूल लगने के समय पर अनुपचारित के सापेक्ष प्रभाव (%)

फूल लगाने के समय पर प्रभाव :

यद्यपि विभिन्न सान्द्रताओं का प्रभाव फूल लगने के समय पर अलग-अलग रहा, परन्तु 100 पी० पी० एम० की सान्द्रता वाले विलयन के उपयोग से फूलगोभी में फूल लगने की अवधि में 21 प्रतिशत की कमी पाई गई (सारणी 2)। प्राप्त परिणामों से प्रकट है कि जिबरेलिक अम्ल के प्रयोग से फूलगोभी में फूल नियत से कम समय में प्राप्त किये जा सकते हैं। इस तरह के परिणाम पहले भी विभिन्न फसलों पर पाये गये हैं[3, 4, 6, 7]।

बीजोत्पादन एवम् उसके मुख्य कारकों पर प्रभाव :

प्रयोग से प्राप्त परिणाम यह भी सिद्ध करते हैं कि बीजोत्पादन पर जिबरेलिक अम्ल का प्रभाव विभिन्न सान्द्रताओं पर भिन्न-भिन्न रहा। 100 पी० पी० एम० की सान्द्रता सबसे अधिक प्रभावशाली रही, जिस पर अनुपचारित के सापेक्ष 38 प्रतिशत अधिक बीजोत्पादन हुआ जबकि 200 पी० पी० एम० की सान्द्रता पर 27.27 प्रतिशत अधिक बीजोत्पादन हुआ (सारणी 2)। सम्भवतः अधिक बीजोत्पादन होने का मुख्य श्रेय उसके विभिन्न कारकों को जाता है, क्योंकि 100 पी० पी० एम० की सान्द्रता पर इसके विभिन्न कारकों पर सबसे अधिक बढ़ोत्तरी हुई जिसका परिणाम अधिक बीजोत्पादन रहा (चित्र 1, सारणी 1)। इस प्रकार के प्रयोग से पहले भी विभिन्न फसलों में इसी तरह के परिणाम प्राप्त हो चुके हैं[8, 9]।

कृतज्ञता-ज्ञापन

लेखकों में बनारसी यादव एवम् भानु प्रकाश श्रीवास्तव छात्रवृत्ति प्रदान करने हेतु क्रमशः विश्वविद्यालय अनुदान आयोग एवम् सी० एस० आई० आर० दिल्ली के आभारी हैं।

निर्देश

1. सैच, जे०, अरब बाट इन्सट वीब 1980, 3, 492-488
2. गर्नर, डब्लू० डब्लू० तथा ऐलार्ड एच०, ऐग्रि०, जर्न० रिसर्च 1920, 18 2, 553-606
3. लैंग, ए०, प्रोसी, नेश० ऐकेड० साइंस, यू० एस० 1957, 43, 709-717
4. लैंग, ए०, इन इनसाइक्लोपीडिया प्लांट फिजियॉल, 1965, 15 (1)
5. हिलमैन, डब्लू० एस०, दि फिजियालजी आफ फ्लावरिंग, हल्ट रिनेहर्ट तथा विन्सटान, न्यूयार्क, 1964
6. कोली, एस०, बाट० रिव्यू, 1969, 35, 195-200
7. चालिक्यान, एम० के०, एनूवल रिव्यू प्लाण्ट फिजियालजी, 1968, 19, 1-37
8. बर्मन, टी० एस० तथा मोनिबेल, एल०, इण्डियन जे० प्लाण्ट फिजियालजी, 1989, 32 (2), 151-152
9. वान ओबरवीक, जे०, पी 37-58 इन प्रोसी प्लाण्ट साइंस सिम्पोजियम, कैम्बेल सोप-को कार्म्डेन, एन० जे० 1962

लेखकों से निवेदन

1. विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका में वे ही अनुसन्धान लेख छापे जा सकेंगे, जो अन्यत्र न तो छपे हों और न आगे छापे जायँ। प्रत्येक लेखक से इस सहयोग की आशा की जाती है कि इसमें प्रकाशित लेखों का स्तर वही हो जो किसी राष्ट्र की वैज्ञानिक अनुसन्धान पत्रिका का होना चाहिये।

2. लेख नागरी लिपि और हिन्दी भाषा में पृष्ठ के एक ओर ही सुस्पष्ट अक्षरों में लिखे अथवा टाइप किये आने चाहिये तथा पंक्तियों के बीच में पार्श्व संशोधन के लिये उचित रिक्त स्थान होना चाहिए।

3. अंग्रेजी में भेजे गये लेखों के अनुवाद का भी कार्यालय में प्रबन्ध है। इस अनुवाद के लिये तीन रुपये प्रति मुद्रित पृष्ठ के हिसाब से पारिश्रमिक लेखक को देना होगा।

4. लेखों में साधारणतया यूरोपीय अक्षरों के साथ रोमन अंकों का व्यवहार भी किया जा सकेगा, जैसे $(K_4FeCN)_6$ अथवा $\alpha\beta_1\gamma^4$ इत्यादि। रेखाचित्रों या ग्राफों पर रोमन अंकों का भी प्रयोग हो सकता है।

5. ग्राफों और चित्रों में नागरी लिपि में दिये आदेशों के साथ यूरोपीय भाषा में भी आदेश दे देना अनुचित न होगा।

6. प्रत्येक लेख के साथ हिन्दी में और अँग्रेजी में एक संक्षिप्त सारांश (Summary) भी आना चाहिये। अंग्रेजी में दिया गया यह सारांश इतना स्पष्ट होना चाहिये कि विदेशी संक्षिप्तियों (Abstract) में इनसे सहायता ली जा सकेंगे।

7. प्रकाशनार्थ चित्र काली इंडिया स्याही से ब्रिस्टल बोर्ड कागज पर बने आने चाहिये। इस पर अंक और अक्षर पेन्सिल से लिखे होने चाहिये। जितने आकार का चित्र छापना है, उसके दुगुने आकार के चित्र तैयार होकर आने चाहिये। चित्रों को कार्यालय में भी आर्टिस्ट से तैयार कराया जा सकता है, पर उसका पारिश्रमिक लेखक को देना होगा। चौथाई मूल्य पर चित्रों के ब्लाक लेखकों के हाथ बेचे भी जा सकेंगे।

8. लेखों में निर्देश (Reference) लेख के अन्त में दिये जायँगे।
   पहले व्यक्तियों के नाम, जर्नल का संक्षिप्त नाम, फिर वर्ष, फिर भाग (Volume) और अन्त में पृष्ठ संख्या। निम्न प्रकार से—

   फॉवेल, आर० आर० और म्युलर, जे०, जाइट फिजिक० केमि०, 1928, 150, 80।

9. प्रत्येक लेख के 50 पुनर्मुद्रण (रिप्रिन्ट) मूल्य दिये जाने पर उपलब्ध हो सकेंगे।

10. लेख "सम्पादक, विज्ञान परिषद् अनुसन्धान पत्रिका, विज्ञान परिषद्, महर्षि दयानन्द मार्ग, इलाहाबाद-2" इस पते पर आने चाहिये। आलोचक की सम्मति प्राप्त करके लेख प्रकाशित किये जाएँगे।

प्रबंध सम्पादक